चौथी दुनिया

www.chauthiduniya.com

मूल्य 5 रुपये

हिंदी का पहला साप्ताहिक अख़बार

1986 से प्रकाशित | 08 मई- 14 मई 2017 | नई दिल्ली | हर शुक्रवार को प्रकाशित | Postal Regn. No. DL (ND)-11/6139/2015-17, RNI No. DELHIN/2009/30467

दलाईलामा की अरुणाचल यात्रा के छह दिन पहले

बर्मा तक घुस आया था चीन

चीन ने म्यांमार में बिना इजाजत घुसने का किया अंतरराष्ट्रीय अपराध

बौखलाया चीन सीधी धमकी पर उतरा, नतीजा भुगतने की चुनौती दी

भारतीय सेना ने पूछा, अब नहीं तो कब बनेगा माउंटेन स्ट्राइक कोर?

प्रभात रंजन दीन

बहुत लोगों को यह पता नहीं है कि तिब्बत के निर्वासित धर्मगुरु दलाईलामा के अरुणाचल आगमन के ठीक एक महीने पहले चीन की सेना भारत में घुसने की तैयारियां कर रही थी. दलाईलामा की तवांग यात्रा पर पूरी दुनिया की निगाह थी, इसलिए चीन बाधा तो नहीं पहुंचा पाया, लेकिन अपनी हरकतों से बाज भी नहीं आया. भारतीय सैन्य खुफिया एजेंसी ने केंद्र को यह रिपोर्ट दी है कि चीन की सेना मार्च महीने में भारत के पड़ोसी देश बर्मा (म्यांमार) में काफी अंदर तक घुस आई थी. चीन ने बाकायदा भारतीय सेना को दिखाते हुए एकतरफा युद्धाभ्यास किया और म्यांमार सरकार की घिघ्घी बंधी रही. भारत सरकार ने भी इस पर गोपनीयता बनाए रखी. भारत सरकार ने इस मसले पर कूटनीतिक चुप्पी साध कर दलाईलामा के तवांग दौरे में कोई खलल नहीं आने दी. इससे चीन और बौखला गया और उसने अरुणाचल प्रदेश के जिलों का चीनी नामकरण करने और युद्ध की धमकियां देने की बचकानी हरकतें शुरू कर दीं. चीन यह समझने लगा है कि तिब्बत को लेकर विश्व-जनमत उसके खिलाफ खड़ा हो गया है और यह तिब्बत का भविष्य तय करेगा. चीन की बौखलाहट भारत की सैन्य शक्ति से नहीं, बल्कि उसकी लगातार बढ़ती कूटनीतिक ताकत से है. इस वजह से अब वह सीधी धमकियों पर उतर आया है. सैन्य विशेषज्ञ कहते हैं कि चीन की धमकियों को गंभीरता से लेने की जरूरत है, क्योंकि लापरवाही का खामियाजा हम 1962 के युद्ध में भुगत चुके हैं. भारतीय सेना की युद्धक-शक्ति बढ़ाने पर भारत सरकार कोई ध्यान नहीं दे रही है, यह भाजपा सरकार के राष्ट्रवाद की असलियत है. पर्वतीय क्षेत्र में कारगर तरीके से मार करने में विशेषज्ञ 'माउंटेन स्ट्राइक कोर' के गठन का प्रस्ताव केंद्र सरकार दबाए बैठी है. जबकि यह देश की आपातकालीन सुरक्षा अनिवार्यता की श्रेणी में आता है. सेना के आयुध, उपकरण, तोपखाने और वाहन तक पुराने हो चुके हैं. इन्हें तत्काल बदलने के लिए सेना की तरफ से केंद्र को बार-बार तकनीकी रिपोर्ट भेजी जाती है, लेकिन प्रधानमंत्री और रक्षा मंत्री इस पर ध्यान नहीं देते और वित्त मंत्री हमेशा अड़ंगा डाल देते हैं.

मिलिट्री इंटेलिजेंस की रिपोर्ट के जरिए पहले हम चीन की हालिया हरकतों का जायजा लेते चलें, जो उसने बर्मा (म्यांमार) में की है. उसके बाद हम अपनी सैन्य शक्ति की असलियत खंगालेंगे. इस साल मार्च महीने में बर्मा सीमा क्षेत्र में काफी अंदर तक चीनी सैनिकों को युद्धाभ्यास करते हुए देखा गया. इसमें चीन का युद्धाभ्यास कम, उसकी युद्ध-तत्परता अधिक दिख रही थी. मिलिट्री इंटेलिजेंस की रिपोर्ट ने रक्षा मंत्रालय से पीएमओ तक सनसनी फैला दी, पर इसे सार्वजनिक नहीं किया गया. मिलिट्री इंटेलिजेंस ने 28 मार्च को बर्मा में हुए चीनी सेना के युद्धाभ्यास की तस्वीरें भी दीं, जिनमें चीनी सैनिक पूरी तैयारियों के साथ बख्तरबंद होकर युद्धाभ्यास कर रहे हैं. खूबी यह है कि दूसरे देश की धरती पर किया गया चीन का यह युद्धाभ्यास साझा नहीं था. इसमें केवल चीनी सैनिक शामिल थे और इसके लिए म्यांमार सरकार से कोई औपचारिक इजाजत नहीं ली गई. अंतरराष्ट्रीय सैन्य कानून के तहत यह चीन का अपराध है. किसी भी देश में साझा युद्धाभ्यास का कार्यक्रम दोनों देशों की सरकार की सहमति से ही किया जा सकता है. एक देश की सेना किसी दूसरे देश में अकेले युद्धाभ्यास नहीं कर सकती, इसके लिए कोई भी देश दूसरे देश को इजाजत नहीं देता. लेकिन चीन की इस दादागीरी के सामने बर्मा (म्यांमार) झुक गया. अंतरराष्ट्रीय फोरम पर बर्मा को यह मसला उठाना चाहिए था, लेकिन उसने चुप्पी साध ली. यह भारत के लिए अत्यंत चिंताजनक स्थिति (अलार्मिंग सिचुएशन) है. रक्षा मंत्रालय के एक अधिकारी ने कहा कि बर्मा के जंगल में घुस कर भारतीय सेना ने जून 2015 में आतंकियों के खिलाफ जो ऑपरेशन चलाया था, चीन ने उसी का जवाब दिया है. बर्मा के जंगलों में घुस कर आतंकवादियों के खिलाफ चलाए गए ऑपरेशन में भारतीय सेना ने एनएससीएन के खापलांग गुट के बागियों की मदद ली थी. उसी तरह चीन बर्मा में घुसने के लिए चीनी मूल के कोकांग समुदाय का साथ ले रहा है. सैन्य खुफिया शाखा के एक आला अधिकारी कहते हैं कि चीन एक तरफ बर्मा सेना के साथ सहानुभूति जताता है, लेकिन दूसरी तरफ बर्मा सेना के साथ लंबे अर्से से युद्ध लड़ रहे कोकांग आर्मी का साथ दे रहा है और अपनी धरती पर पनाह भी दे रहा है. कोकांग आर्मी के सदस्यों को शरणार्थी बता कर चीन उन्हें अपने यहां सुरक्षित ठिकाने मुहैया कराता है. कोकांग आर्मी का चेयरमैन फेंग क्या शिन चीन में ही रहता है. कोकांग समुदाय के लोगों को सुरक्षा देने की हिदायत देकर चीन म्यांमार सरकार को हड़काता भी रहता है. चीन सरकार बर्मा से स्वायत्तता चाह रहे कैरेन समुदाय और उनकी कैरेन नेशनल लिबरेशन आर्मी की भी पीठ सहलाती रहती है, ताकि बर्मा उसके सामने हमेशा कमजोर बना रहे. कोकांग आर्मी में चीन के लोगों की लगातार भर्ती हो रही है. भारतीय सैन्य खुफिया एजेंसी को प्राप्त रिपोर्ट के मुताबिक चीन की पीपुल्स लिबरेशन आर्मी से रिटायर हुए सैनिकों को म्यांमार नेशनल डेमोक्रैटिक एलाएंस आर्मी में आकर्षक पैकेज का 'ऑफर' देकर भर्ती किया जा रहा है. रक्षा विशेषज्ञ मानते हैं कि भारत को टार्गेट करने के लिए चीन बर्मा, भूटान, बांग्लादेश और नेपाल को पंगु और भयभीत बना कर रखना चाहता है. 1962 के भारत-चीन युद्ध के बाद अमेरिकी खुफिया एजेंसी सीआईए ने कहा था, चीन भारत पर अगला आक्रमण बर्मा के रास्ते से ही करेगा. बर्मा में चीन की मौजूदा हरकत सीआईए की 55 साल पुरानी रिपोर्ट को आज प्रासंगिक बनाती है.

बहरहाल, दलाईलामा के अपने जन्म स्थान तवांग का दौरा कर जाने के बाद चीन ने बौखलाहट में अरुणाचल प्रदेश के छह इलाकों का चीनी नामकरण कर दिया. दरअसल, भारत और चीन की सीमा पर 3,488 किलोमीटर लंबी वास्तविक नियंत्रण रेखा विवाद में है. चीन अरुणाचल प्रदेश को दक्षिण तिब्बत बताता है. दूसरी तरफ भारत का कहना है कि विवादित क्षेत्र अक्सई चिन तक है, जिस पर 1962 के युद्ध के दौरान चीन ने कब्जा कर लिया था. चीन ने अपना दावा मजबूत करने के इरादे से 14 अप्रैल को 'दक्षिण तिब्बत' के छह स्थानों का नाम चीनी, तिब्बती और रोमन लिपि में मानकीकृत कर दिए. चीन ने गुलिंग गोंपा को नया नाम वोग्येनलिंग दिया है. यह इलाका तवांग के बाहरी क्षेत्र में स्थित है. छठे दलाई लामा का जन्म यहीं हुआ था. ऊपरी सुबानसिरी जिले में स्थित देपोरीजो का नाम मीला री रखा गया है. यह सुबानसिरी नदी के पास स्थित है, जो अरुणाचल प्रदेश की प्रमुख नदियों में से एक है और ब्रह्मपुत्र की बड़ी सहायक नदी है. भारी सैन्य मौजूदगी वाले मेचूका का नाम बदलकर मेनकूका करके चीन ने इस क्षेत्र पर भारत के दावे को सीधी चुनौती दी है. भारतीय वायुसेना का यहां आधुनिक लैंडिंग ग्राउंड है. यह पश्चिमी सियांग जिले में है. बुमला वह जगह है, जहां दलाई लामा अरुणाचल प्रदेश की चार अप्रैल 2017 से 13 अप्रैल 2017 तक की यात्रा के दौरान पहले ठहराव में रुके थे. चीन ने इसका नाम (शेष पृष्ठ 2 पर)

चीन के आगे हम 'फट्टू' क्यों?

'फट्टू' शब्द अब कोई असंवैधानिक शब्द नहीं है, क्योंकि बोल-चाल से लेकर कहानी-उपन्यासों और फिल्मों के संवाद लेखन में इस शब्द का खूब चलन होता है. अगर यह शब्द-संबोधन असंवैधानिक होता, तो सेंसर बोर्ड उन ढेर सारी फिल्मों को पास नहीं करता, जिनमें यह शब्द बार-बार कई बार आता है. बहरहाल, भारत-चीन के सम्बन्धों के परिप्रेक्ष्य में 'फट्टू' शब्द का संदर्भ बनता है. यही शब्द भारत-पाकिस्तान सम्बन्धों के संदर्भ में माकूल नहीं है. 1962 से लेकर आज तक हम चीन की हरकतों के जवाब में कोई माकूल मौखिक जवाब भी नहीं दे पाए हैं, कार्मिक जवाब की तो बात छोड़ ही दें. 'चौथी दुनिया' के प्रधान संपादक श्री संतोष भारतीय ने 2015 में ही अपने संपादकीय स्तंभ 'जब तोप मुकाबिल हो' में लिखा था कि हम पाकिस्तान के सामने तो दहाड़ते हैं लेकिन चीन के सामने हमारी हालत बिल्ली के सामने पड़े चूहे जैसी क्यों हो जाती है! उसकी अहम वजह यह है कि चीन के सामने भारत के बाजार को खोल कर रख देने में हम इस तरह उपकृत हुए हैं कि हमारे मुंह पर चीन का उपकार चिपक गया है. बोलचाल की भाषा में कहें, तो चीन से घूस खाने वाले भारत के सत्ता अलमबरदारों की चीन के आगे चूं नहीं सरकती. कठोर सच यही है कि नेताओं-नौकरशाहों ने भारतीय बाज़ार को बर्बाद करने में चीनी हितों का साथ दिया है. भारत का संचार क्षेत्र इसका सबसे वीभत्स उदाहरण है, जिसे पूरी तरह चीन के हाथों गिरवी रख दिया गया है. चीन से उपकृत होने वाले हमारे सत्ता-सियासतदानों ने भारतीय सेना को भी पंगु बना कर रखा है, ताकि वे चीन के सामने खड़े न हो पाएं. भारतीय थलसेना के पूर्व सेनाध्यक्ष जनरल वीके सिंह ने तत्कालीन प्रधानमंत्री और रक्षा मंत्री को कम से कम आधा दर्जन चिट्ठियां लिखी होंगी कि भारतीय सेना जर्जर हालत में है, उसे सुधारें. लेकिन उस सेनाध्यक्ष के साथ प्रधानमंत्री से लेकर पूरी सत्ता तक नीच सियासत पर उतर आई थी. जनरल सिंह ने लिखा था कि युद्ध की स्थिति में भारतीय सेना के पास अधिकतम एक हफ्ते तक लड़ने के आयुध हैं, उससे अधिक नहीं, वह भी काफी पुराने, जिनमें से अधिकांश के फुस्स हो जाने की ही आशंका है. तत्कालीन केंद्र सरकार ने थलसेनाध्यक्ष की उस चिट्ठी को ही फुस्स कर दिया. ऐसे उदाहरण भरे पड़े हैं कि जब चीन ने भारत का खुलेआम अपमान किया और हमने उसे उतनी ही बेशर्मी से जाने दिया. वायुसेना के मध्य स्तर के अधिकारी से लेकर थलसेना के शीर्ष अधिकारी तक को वीज़ा देने से चीन बड़ी बदतमीजी से मना कर चुका है, लेकिन हम उसका समान प्रतिकार भी नहीं कर पाते. हमारे देश के अंदर घुस कर चीनी सैनिक चौकियां बना लेते हैं, बैनर-पोस्टर लगाते हैं, एक-एक पखवाड़े तक भारतीय सीमा में घुस कर पिकनिक मनाते हैं, भारतीय सैनिकों का मजाक उड़ाते हैं, उनके साथ धक्का-मुक्की खेलते हैं और हमें खुलेआम अपमानित करके चले जाते हैं. तब हम अपना मजबूत सीना क्यों नहीं नापते और ठोकते? इसी सवाल पर लाकर हम अपनी बात रोक देते हैं... ■

बर्मा तक घुस आया था चीन

पृष्ठ 1 का शेष

बदलकर बुमोला कर दिया है. इस क्षेत्र पर वर्ष 1962 में चीनी सैनिकों ने हमला किया था और भारतीय सेना ने उन्हें खदेड़ भगाया था. चीन ने नमाका चू क्षेत्र का नाम बदलकर नमकापब री कर दिया है. इस क्षेत्र में पन-बिजली की अपार संभावनाएं हैं. चीन ने छठे स्थान का नाम बदलकर कोइदेनगारबो री किया है, लेकिन यह स्पष्ट नहीं है कि यह नाम किस क्षेत्र का रखा गया है. चीनी नामांतरण मसले पर भारत ने कहा कि भारत के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करने का चीन को कोई अधिकार नहीं है. भारत ने कटाक्ष भी किया कि बीजिंग का नाम बदल कर मुंबई कर दिया जाए, तो क्या वह भारत का हो जाएगा!

रक्षा मामलों के विशेषज्ञ कहते हैं कि मार्च महीने में म्यांमार में चीनी सेना की सीधी घुसपैठ और अप्रैल महीने में चीनी राष्ट्रपति शी चिनफिंग के चीनी सेना से किए गए युद्ध-आह्वान को काफी सतर्कता से देखे जाने की जरूरत है. चीन के राष्ट्रपति ने पीएलए के नवगठित '84 लार्ज मिलिट्री यूनिट' के जवानों से कहा है कि वे लड़ाई के लिए तैयार रहें और इलेक्ट्रॉनिक, सूचना और स्पेस युद्ध जैसे नए प्रकार की युद्ध-क्षमता विकसित करें. दलाईलामा के तवांग दौरे के बाद चीन भारत को सीधे तौर पर परिणाम भुगतने की धमकी दे चुका है.

अब हम अपनी युद्ध-शक्ति के प्रति सरकार की रुचि का भी विश्लेषण करते चलें. चीन से युद्ध में कारगर तरीके से मुकाबला करने के लिए माउंटेन स्ट्राइक कोर को शीघ्र अस्तित्व में लाने के लिए भारत सरकार कोई दिलचस्पी नहीं दिखा रही है. सेना के आधुनिकीकरण और सेना की बढ़ोत्तरी की दिशा में भारत सरकार की बेरुखी आने वाले समय में भारतीय सेना के लिए खतरनाक साबित हो सकती है. 90 हजार विशेषज्ञ सैनिकों की क्षमता वाले माउंटेन स्ट्राइक कोर को सक्रिय करने का काम 2013 से ही चल रहा है, लेकिन सरकार की ढिलाई से यह थम गया है. जबकि चीन से खतरा तेजी से बढ़ रहा है. केवल मौजूदा सरकार ही नहीं, पूर्ववर्ती कांग्रेस सरकार ने भी माउंटेन स्ट्राइक कोर के गठन के लिए 64 हजार करोड़ रुपए की मंजूरी नहीं दी थी. हालांकि माउंटेन स्ट्राइक कोर के गठन के प्रस्ताव को वर्ष 2013 में यूपीए सरकार से ही हरी झंडी मिली थी. इस कोर को खास तौर पर हिमालय क्षेत्र में और तिब्बत के पठारी क्षेत्र में कारगर युद्ध की विशेषज्ञता के लिए तैयार किया जा रहा था. उम्मीद थी कि सरकार से बजट की मंजूरी मिल जाएगी, लेकिन वह नहीं मिली और मौजूदा राजग सरकार भी उस पर कुंडली मार कर बैठ गई. प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भी सेना के कमांडरों के सम्मेलन में इस मसले पर अपनी अनिच्छा जाहिर की थी और तत्कालीन सेनाध्यक्ष जनरल दलबीर सिंह सुहाग को यह कहना पड़ा था कि माउंटेन स्ट्राइक कोर अब वर्ष 2021 के पहले सक्रिय नहीं हो पाएगा. हालात यह है कि देश के चार स्ट्राइक कोर में से एक 17वीं स्ट्राइक कोर झारखंड में निष्क्रिय पड़ी हुई है. तीन अन्य कोर पाकिस्तान की विभिन्न सीमाओं पर तैनात हैं. स्ट्राइक कोर को पीस एरिया में डालना बेवकूफाना सामरिक-नीति का नतीजा माना जाता है. एक आला सेनाधिकारी ने 17वीं स्ट्राइक कोर को 'नाकारा' और 'अधूरा' बताया. उनका कहना था कि एक कोर में न्यूनतम दो डिवीजन होने चाहिए, जबकि 17वीं स्ट्राइक कोर के पास केवल एक ही डिवीजन है. उक्त अधिकारी सुरक्षा के मद्देनजर भारत के भविष्य को आशंका की नजर से देखते हैं. केंद्र सरकार की उपेक्षापूर्ण नीति के बावजूद भारतीय सेना ने पश्चिम बंगाल के पानागढ़ में 59वीं माउंटेन डिवीजन तो गठित कर लिया, लेकिन पठानकोट में 72वीं माउंटेन डिवीजन के गठन का काम जहां का तहां रुका रह गया. 59वीं माउंटेन डिवीजन में मात्र 16 हजार विशेषज्ञ सैनिक हैं.

भारतीय सेना के लिए केंद्र सरकार ने जो अर्थशास्त्र रचा है, वह भी कम हास्यास्पद नहीं है. 2.47 लाख करोड़ के सैन्य बजट का 70 फीसदी हिस्सा सेना के वेतन और अनुरक्षण पर खर्च हो जाता है. महज 20 प्रतिशत हिस्सा सैन्य उपकरणों की खरीद के लिए बचता है. सेना को हर साल केवल उपकरणों की खरीद के लिए कम से कम 10 हजार करोड़ रुपए की जरूरत है, जबकि उसके पास बचते हैं मात्र 15 सौ करोड़ रुपए. भारतीय सेना के लिए राइफलें, वाहन, मिसाइलें, तोपें और हेलीकॉप्टर खरीदने की अनिवार्यता चार लाख करोड़ रुपए के लिए लंबित पड़ी हुई है. जबकि सेना की युद्ध क्षमता को विश्व मानक पर दुरुस्त रखने के लिए यह काम निहायत जरूरी है. अब तो पाकिस्तान के साथ-साथ चीन की ओर से भी खतरा तेजी से घिरता जा रहा है. ऐसे में यह काम पहली प्राथमिकता पर होना चाहिए.

यूपीए सरकार की ही तरह राजग सरकार के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भी माउंटेन स्ट्राइक कोर को सक्रिय करने के लिए जरूरी 64 हजार करोड़ रुपए मंजूर नहीं किए हैं. इस वजह से न सेना मजबूत हो सकी और न चीन से लगी अंतरराष्ट्रीय सीमा पर सुरक्षा बंदोबस्त पुख्ता हो सका. मोदी ने तो माउंटेन स्ट्राइक कोर के गठन के प्रस्ताव को ही दोबारा पुनरीक्षण (रिव्यू) में डाल दिया और सुरक्षा सलाहकार अजित डोवाल को इसकी जिम्मेदारी दे दी. डोवाल ने भी 17वीं कोर को निष्क्रिय करने की सिफारिश कर दी. दिलचस्प यह रहा कि तत्कालीन रक्षा मंत्री मनोहर पर्रीकर ने पहले तो कहा था कि माउंटेन स्ट्राइक कोर पर आने वाले खर्च को आधा कर दिया जाएगा और उसमें से 35 हजार सैनिक भी कम कर दिए जाएंगे. फिर पर्रीकर अपनी बात से पलटे और कहा कि कोर के गठन का काम धीमी गति से, लेकिन चल रहा है. यह भारत सरकार की अंदरूनी अराजक स्थिति है. उधर, चीन अपनी सैन्य क्षमता लगातार बढ़ाता जा रहा है.

स्ट्राइक कोर की खासियत शत्रु पर सीधे प्रहार की होती है. 1962 के युद्ध में भारतीय सेना ने रक्षात्मक प्रणाली का खामियाजा भुगत लिया था. इसलिए दुश्मन पर सीधा प्रहार करने और दुश्मन के इलाके में घुस कर तबाही मचाने की रणनीति पर काम शुरू हुआ. स्ट्राइक कोर इसी परिवर्तित रणनीति का हिस्सा है, लेकिन सरकार की अदूरदर्शिता के कारण इस पर ग्रहण लगा हुआ है. विडंबना यह है कि कारगिल युद्ध में भी भारत को सैन्य आक्रामकता का लाभ मिला और अभी हाल ही में पाकिस्तान के खिलाफ सर्जिकल स्ट्राइक करके भारतीय सेना ने प्रहार की रणनीति को कारगर तरीके से आजमाया. सर्जिकल स्ट्राइक पर भाजपानीत केंद्र सरकार राजनीति तो खूब चमकाती रही, लेकिन सेना को चमकाने की प्राथमिकता पर कोई ध्यान नहीं दिया. भारतीय सेना बदली हुई स्थितियों में तोपखाने (आर्टिलरी), ब्रह्मोस मिसाइलें, हल्के टैंक, विशेष बल और हेलीकॉप्टर की ताकत लेकर स्ट्राइक कोर को अधिक से अधिक धारदार और आक्रामक बनाना चाहती है, लेकिन मोदी सरकार की धार भोथरी साबित हो रही है.

आपको याद दिलाते चलें कि वर्ष 1986 में अरुणाचल प्रदेश के सुमडोरोंग चू घाटी में चीनी सेना के साथ हुई तनातनी में तत्कालीन थलसेना अध्यक्ष जनरल के सुंदरजी ने 'ऑपरेशन फाल्कन' के तहत पूरी एक इन्फैंट्री ब्रिगेड को वायुसेना के हवाई जहाजों के जरिए उतार दिया था. उसके बाद ही स्ट्राइक कोर की योजना पर सैन्य रणनीतिकार तेजी से काम करने लगे. वर्ष 2003 में तत्कालीन सेनाध्यक्ष जनरल एनसी विज के कार्यकाल में पाकिस्तान और चीन, दोनों सीमाओं पर नई सुरक्षा रणनीति अपनाने की योजना बनी. तभी यह योजना बन गई कि 12वीं पंचवर्षीय योजना (2012-2017) में माउंटेन स्ट्राइक कोर को अस्तित्व में लाया जाएगा. इसके बाद भी भारत को चीन की तरफ से कई तीखे और अपमानजनक व्यवहार झेलने पड़े. चीनी सेना भारतीय क्षेत्र में 19 किलोमीटर अंदर तक घुस आई, पर हम कुछ नहीं कर पाए. अप्रैल-मई 2013 की घटना से खुद भारतीय सेना भी शर्मसार हुई. सेनाध्यक्ष जनरल बिक्रम सिंह ने सुरक्षा मामलों की कैबिनेट कमेटी के समक्ष खुद उपस्थित होकर सीमा की विषम स्थिति के बारे में तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह व अन्य वरिष्ठ मंत्रियों को अवगत कराया. तब जाकर जुलाई 2013 में यूपीए सरकार ने माउंटेन स्ट्राइक कोर के प्रस्ताव को औपचारिक मंजूरी दे दी. लेकिन कोर को सक्रिय करने के लिए जरूरी धन की मंजूरी नहीं दी. यूपीए के बाद केंद्र की सत्ता में आई राजग की सरकार ने भी इसकी मंजूरी नहीं दी और उल्टा कोर गठन के प्रस्ताव को ही पेंच में उलझा दिया. रक्षा मंत्रालय के कुछ अधिकारी अब माउंटेन स्ट्राइक कोर के 2021 में अस्तित्व में आने की उम्मीद जताते हैं, लेकिन इसे पक्का नहीं बताते. वे यह भी आशंका जताते हैं कि तबतक कहीं देर न हो जाए. चीन से लगने वाली संवेदनशील सीमा में सेना के सुगमता से आने-जाने के लिए ढांचागत विकास की रफ्तार ही इतनी ढीली है कि चीन बड़ी आसानी से इधर आकर भारतीय रक्षा प्रणाली को तहस-नहस कर सकता है. आप आश्चर्य करेंगे कि विस्तृत चीन सीमा तक पहुंचने वाली अत्यंत संवेदनशील 75 सड़कों में से केवल 21 सड़कें ही अब तक तैयार हो पाई हैं. 54 सड़कों के निर्माण का काम अभी शुरू भी नहीं हुआ है. वर्ष 2010 में ही चीन सीमा क्षेत्र में 28 रेलवे लाइनें बिछाने का प्रस्ताव मंजूर किया गया था. लेकिन आज तक इस प्रोजेक्ट पर काम शुरू नहीं हुआ. यह संसद में रखे गए आधिकारिक दस्तावेज से ली गई सूचना है.

बर्मा के अंदर घुस आए चीन के बख्तरबंद सैनिक

अक्सई चिन तो छिन गया, अब लद्दाख की सुरक्षा जरूरी

देश की सुरक्षा के प्रति भारत सरकार की लापरवाही के कारण ही पूर्वी लद्दाख का अक्सई चिन का हिस्सा चीन ने अपने कब्जे में ले लिया. उस समय एक सेनाधिकारी ने अक्सई चिन हाईवे पर चीन के कब्जे की फोटो भी सेना मुख्यालय को पेश की थी, लेकिन पहले सेना मुख्यालय ने इसे सही नहीं माना था. बाद में वही कठोर सत्य साबित हुआ. यह भी साबित हुआ कि उस संवेदनशील क्षेत्र में भारतीय सुरक्षा बल की तरफ से कोई गश्त नहीं होती थी. उस घटना के बाद भी भारत सरकार होश में नहीं आई. तब सेना के तीन अतिरिक्त डिवीजन को सक्रिय करने का प्रस्ताव केंद्र सरकार को भेजा गया था. इनमें से चार ताकतवर ब्रिगेड के साथ एक डिवीजन को खास तौर पर लद्दाख में तैनात करने की जरूरत पर जोर दिया गया था. लेकिन केंद्र सरकार ने बेहद लचर रवैया अख्तियार करते हुए बहुत मीन-मेख के बाद पूर्वोत्तर (नेफा) के लिए एक डिवीजन और लद्दाख के लिए महज एक ब्रिगेड की मंजूरी दी थी. इसका खामियाजा भारतीय सेना ने 1962 के युद्ध में भुगत लिया. चीन की तैयारियों को भांपते हुए सेना ने 114वीं ब्रिगेड के लिए पांच अतिरिक्त बटालियन देने की मांग की थी, लेकिन सरकार ने केवल दो बटालियनों की मंजूरी दी थी. तत्कालीन सरकार में इतनी अराजकता थी कि मंजूरी के बावजूद एक बटालियन सीमा पर पहुंची ही नहीं.

1962 के युद्ध में चीन से मार खाने के बाद लेह में तीसरी इन्फैंट्री डिवीजन के मुख्यालय की स्थापना की गई. 114वीं ब्रिगेड मुख्यालय को चुशुल भेजा गया. 70वीं ब्रिगेड का मुख्यालय पश्चिमी कश्मीर से भेजा गया और वहां 163वीं ब्रिगेड को भी तैनात किया गया. 'दूरदर्शी' भारत सरकार ने 1971 युद्ध के पहले पाकिस्तान सीमा से 163वीं ब्रिगेड वापस बुला ली थी और इसका कोई वैकल्पिक इंतजाम भी नहीं किया था. 21वीं सदी के पहले दशक तक भारतीय सेना की केवल चार नियमित इन्फैंट्री बटालियनें चीन सीमा पर तैनात थीं. चीन की सीमा पर सेना की पुख्ता तैनाती से भारत सरकार हमेशा हिचकती रही है. नेहरू के समय भी, कांग्रेस के शासनकाल के दौरान भी और मोदी के काल में भी. वर्ष 2008 से लेकर 2013 के बीच अप्रत्याशित रूप से तेजी से बढ़ी चीनी घुसपैठ को रोकने की दिशा में भी भारत सरकार ने कोई सख्त कदम उठाने से परहेज किया. जबकि भारतीय सेना के रणनीतिक विशेषज्ञ हमेशा अरुणाचल प्रदेश, लद्दाख और कश्मीर में माउंटेन स्ट्राइक कोर को अस्तित्व में लाने की हिमायत करते रहे. भारत-चीन सीमा पर 'जिस दौलत बेग ओल्डी' क्षेत्र में चीनी सैनिकों ने घुस कर काफी दिनों तक दादागीरी दिखाई थी, वहां ब्रिगेड की तैनाती के आपातकालीन प्रस्ताव पर भी केंद्र सरकार ने कोई ध्यान नहीं दिया. सेना पूर्वी लद्दाख में भी एक टैंक ब्रिगेड तैनात करने की सिफारिश लगातार करती आ रही है.

बिखरा हुआ 'कमांड एंड कंट्रोल सिस्टम'

भारत के सामने चुनौतियां बहुआयामी हैं. भारतीय सेना एक तरफ जम्मू कश्मीर में जूझ रही है, तो दूसरी तरफ पाकिस्तान के साथ उसकी भिड़ंत लगातार हो रही है. युद्ध विराम संधि बेमानी है. पाकिस्तान को युद्ध नैतिकता से कोई लेना-देना नहीं रह गया है. लिहाजा, पाकिस्तान सीमा के उत्तरी और पश्चिमी सेक्टर दोनों हिस्सों में पुख्ता सुरक्षा बंदोबस्त बेहद अनिवार्य है. तीसरा मुहाना चीन सीमा की तरफ से खुल रहा है. चीन की हरकतों और भारत सरकार की आपराधिक-लापरवाही के कारण देश पर उस दिशा से भी खतरा लगातार बढ़ता जा रहा है. चीन की पूरी मौलिकता मक्कारी और नीति-हीनता है. वह भी भारत में कई तरफ से घुसने का रास्ता बना रहा है. भारतीय भूमि अक्सई चिन पर वह पहले से कब्जा जमाए बैठा है. लद्दाख उसकी ज़द में है. अरुणाचल प्रदेश का विस्तृत क्षेत्र चीन की तरफ खुला हुआ है. सिक्किम की तरफ से भी चीनी घुसपैठ हो सकती है. इधर, उत्तराखंड के रास्ते से भी चीन की सेना भारतीय सीमा में घुस सकती है. दक्षिण के समुद्र मार्ग से भी चीन की हरकतें देखी जा सकती हैं. साउथ चाइना सी में चीन की दादागीरी पूरी दुनिया देख रही है. साउथ चाइना सी पर चीन के कब्जे को संयुक्त राष्ट्र पूरी तरह अवैध घोषित कर चुका है, लेकिन चीन अंतरराष्ट्रीय कानून को ठेंगे पर रख कर चल रहा है. भारत का सीमा-क्षेत्र चारों ओर से खुला हुआ है. पाकिस्तान और चीन की शह पर बांग्लादेश भी एक समय भारत के खिलाफ खुराफात में लगा था, लेकिन शेख हसीना के सत्ता में आने के बाद वहां की स्थितियां बदलीं और भारत-विरोधी माहौल थमा. रक्षा संवेदनशीलता के नजरिए से देखें, तो चीन से लगी सीमा पर पुख्ता सुरक्षा किलेबंदी हमारी सबसे पहली प्राथमिकता पर होनी चाहिए. चीन ने अपनी तरफ से पुख्ता व्यवस्था कर रखी है. चीन की पीपुल्स लिबरेशन आर्मी (पीएलए) को भारतीय सीमा तक पहुंचने में कोई दिक्कत नहीं होगी, क्योंकि तिब्बत और सिक्किम से लगे 'लाइन ऑफ एक्चुअल कंट्रोल' (एलएसी) तक चीन ने सड़कें और रेल लाइन बिछा रखी हैं. जबकि भारतीय सेना को वहां तक पहुंचने में काफी मशक्कत करनी पड़ेगी, क्योंकि भारत सरकार ने इस दिशा में कोई दिलचस्पी नहीं ली है. सैन्य रणनीति के विशेषज्ञ माने जाने वाले एक वरिष्ठ सेनाधिकारी ने 'चौथी दुनिया' से कहा कि ढांचागत दिक्कतों के साथ-साथ भारतीय सुरक्षा प्रणाली के अलग-अलग 'कंट्रोल एंड कमांड' भी सेना के लिए भारी मुश्किलें खड़ी करते हैं, जबकि चीन की सेना एक ही 'कंट्रोल एंड कमांड' से निर्देशित होती है. भारत में अलग-अलग बल सीमा पर चौकसी का काम देखते हैं. पाकिस्तान सीमा पर सीमा सुरक्षा बल (बीएसएफ), बांग्लादेश और नेपाल सीमा पर सशस्त्र सीमा बल (एसएसबी) और चीन सीमा पर भारत-तिब्बत सीमा पुलिस (आईटीबीपी) तैनात है. इसके अलावा असम राइफल्स जैसी क्षेत्रीय सेनाएं भी हैं. इन सबकी नियंत्रण-प्रणाली अलग-अलग है. सेना भी अलग-अलग 'कंट्रोल एंड कमांड सिस्टम' से बंधी है. थलसेना के लिए अलग तो वायुसेना और नौसेना के लिए अलग-अलग 'कंट्रोल एंड कमांड सिस्टम' है. युद्ध के समय एक समेकित नियंत्रण प्रणाली की जरूरत होती है. भारत में सेना की तीनों शाखाओं को मिला कर एक 'यूनिफायड कमांड' बनाने की अर्से से मांग हो रही है, लेकिन भारत सरकार इस पर कान में तेल डाले बैठी है. यानि, चीनी सेना एक ही आदेश पर भारत पर हमला कर सकती है, जबकि भारतीय सेना को ऐसा करने में आदेश की कई प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ेगा और इसमें देरी होने की पूरी गुंजाइश रहती है. ■

feedback@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया
हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

वर्ष 09 अंक 10
08 मई- 14 मई 2017

RNI-DELHIN/2009/30467

संपादक
संतोष भारतीय

एडिटर (इंवेस्टिगेशन)
प्रभात रंजन दीन

सहायक संपादक
सरोज कुमार सिंह (बिहार-झारखंड)
सरयू भवन, वेस्ट बोरिंग केनाल रोड,
हरीलाल स्वीट्स के निकट, पटना-800001
फोन: 0612 3211869, 09431421901

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63 नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के- 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के-2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001
कैंप कार्यालय एफ-2, सेक्टर -11, नोएडा, गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश-201301

फोन न.
संपादकीय 0120-6451999, 6450888
विज्ञापन व प्रसार 022-65500786, +91-8451050786, +91-9266627379
फैक्स न. 0120-2544378

पृष्ठ-16++ (बिहार-झारखंड, उत्तर प्रदेश-उत्तराखंड)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुनः प्रकाशन पर कानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

सैन्य संचार-तंत्र भारत का

क़ब्ज़ा चीन का!

प्रभात रंजन दीन

चीन ने अपनी रक्षा प्रणाली में इलेक्ट्रॉनिक्स और साइबर ऑपरेशन प्रणाली को भी इतना विकसित कर रखा है कि इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि चीनी सेना भारत में घुस जाए और भारतीय सेना का 'कंट्रोल एंड कमांड सिस्टम' चीनी सेना के साइबर-रेजीमेंट द्वारा 'हैक' कर लिया जाए. इस वजह से भारतीय सेना का पूरा संचार-तंत्र ऐन मौके पर कहीं 'हैंग' न हो जाए. इस बात की पूरी आशंका है. पिछले ही साल यह बात आधिकारिक तौर पर उजागर हुई कि चीन की कुख्यात कंपनी हचिसन और मोबाइल फोन कंपनी शाओमी (Xiaomi) ने भारतीय सेना और सुरक्षा तंत्र की जासूसी कराई, जिस वजह से भारतीय सेना को स्मार्ट फोन्स और स्मार्ट ऐप्स पर रोक लगानी पड़ी. पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी आईएसआई को पठानकोट बेस के बारे में महत्वपूर्ण सूचनाएं चीन ने ही मुहैया कराई थीं. चीन अब भी अपने कुछ खास स्मार्ट फोन्स और स्मार्ट एप्लिकेशंस के जरिए भारतीय सेना की संवेदनशील सूचनाएं हासिल कर रहा है. चाइनीज़ कंपनियां हचिसन-वैमपोआ और शाओमी स्मार्ट फोन चीन की मदद कर रही हैं. चीन की पीपुल्स लिबरेशन आर्मी (पीएलए) के साथ मिल कर दुनियाभर में साइबर-जासूसी करने में हचिसन-वैमपोआ कुख्यात रही हैं. पाकिस्तान के बंदरगाहों पर चीन ने हचिसन-वैमपोआ के जरिए ही दखल बनाई है. इस कंपनी से पाकिस्तान को भारी आर्थिक मदद मिल रही है. हचिसन कंपनी कुछ अर्सा पहले तक भारत में काम करती रही, लेकिन 2005-07 में अचानक उसने भारत का कारोबार बंद कर दिया. वोडाफोन ने उसे खरीद लिया. हच के इस तरह भारत से काम समेट लेने के पीछे भारी कर चोरी के अतिरिक्त कई और संदेहास्पद वजहें थीं, लेकिन भारत सरकार ने और भारत की खुफिया एजेंसियों ने उस पर कोई ध्यान नहीं दिया. वही हचिसन प्रतिष्ठान अपनी साझीदार शाओमी के साथ भारतीय सेना की जासूसी में फिर से सक्रिय है. 'चौथी दुनिया' इसके पहले भी यह महत्वपूर्ण सवाल उठा चुका है कि हचिसन को भारत में घुसने की इजाजत किसने दी थी? हचिसन के जरिए भारत के चप्पे-चप्पे में चीनी सेना के कम्युनिकेशन-नेटवर्क स्थापित होने का मौका आखिर किसने दिया था? क्या भारत सरकार को यह नहीं पता था कि हचिसन-वैमपोआ और चीन की सेना साथ मिल कर क्या काम करती है? हचिसन कंपनी का भारत में निवेश किन शर्तों पर हुआ था? उस निवेश को फॉरेन इन्वेस्टमेंट प्रमोशन बोर्ड ने ठीक से मॉनिटर क्यों नहीं किया और कंपनी जब भारत से काम समेट कर जाने लगी, तो उसकी (असली) वजहें जानने की भारत सरकार ने कोशिश क्यों नहीं की? ये ऐसे सवाल हैं, जिसका जवाब देश के समक्ष आना ही चाहिए, जिसे केंद्र सरकार दबाए बैठी है.

भारतीय जमीन से चल रहा है चीनी सेना का कम्युनिकेशन लिंक

देश की सुरक्षा से जुड़ा यह अजीबोगरीब पहलू है कि चीन की पीपुल्स लिबरेशन आर्मी के साइबर रेजीमेंट के साथ मिल कर विभिन्न देशों के संचार तंत्र पर साइबर हमला करने में कुख्यात रही हचिसन-वैमपोआ को न केवल भारत में निवेश की इजाजत दी गई बल्कि भारत की जमीन पर ही हचिसन ग्रुप और चीनी सेना (पीएलए) के बीच कम्युनिकेशन-लिंक स्थापित करने की भी इजाजत मिल गई. हैरत है कि 90 के दशक से लेकर आज तक भारत सरकार इस मसले पर आंख मूंदे है. जाहिर है कि पूरे व्यवस्था-तंत्र को अपने ही देश के दीमक चाट रहे हैं और उसे खोखला कर रहे हैं. हचिसन के वेश में चीनी सेना के देश के घर-घर में घुसने का रास्ता भारत सरकार ने ही खोला और उसे लिबरल पॉलिसी और ग्लोबलाइज्ड इकोनॉमी बता-बता कर अपनी पीठ खुद ही ठोकती रही. आज की असलियत यही है कि हमारे चप्पे-चप्पे पर चीनी सेना की नजर है. देश का एक-एक नागरिक चीन के लिए जासूसी का उपकरण शाओमी फोन की शक्ल में अपने हाथ में लिए घूम रहा है. हचिसन और उसकी साझीदार शाओमी और रेडमी के स्मार्ट फोन्स व स्मैश-एप और वी-चैट जैसे स्मार्ट एप्लिकेशंस के जरिए चीन ने भारत के खिलाफ खूब जासूसी की और अब भी कर रहा है. भारतीय वायुसेना रक्षा मंत्रालय से लगातार यह कहती रही कि चीन का बना स्मार्ट फोन शाओमी और रेडमी जासूसी के काम आ रहा है. लेकिन वायुसेना की सूचना को भारत सरकार ने गंभीरता से लिया ही नहीं. संसद में मामला भी उठा, फिर भी केंद्र सरकार ने विवादास्पद चाइनीज़ स्मार्ट फोन्स को प्रतिबंधित करने या मामले की खुफिया पड़ताल कराने की जरूरत नहीं समझी. सर्च इंजन गूगल ने स्मैश-एप जैसे एप्लिकेशन को अपने प्ले-स्टोर से हटा दिया और यह माना कि एप्लिकेशन का इस्तेमाल पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी भारत के खिलाफ जासूसी के लिए कर रही थी.

चीन के बने मोबाइल फोन्स की करतूतों पर भारत सरकार को चुप्पी साधे देख आखिरकार भारतीय सेना की तीनों इकाइयों ने स्मार्ट फोन्स के इस्तेमाल पर ही पाबंदी लगा दी. भारतवर्ष की लचर साइबर सुरक्षा व्यवस्था का खामियाजा आखिरकार सेना को ही भुगतना पड़ा. थलसेना, वायुसेना और नौसेना में स्मार्ट फोन्स के इस्तेमाल पर रोक के साथ-साथ फेसबुक, ट्विटर, व्हाट्सएप, स्मैश-एप, वी-चैट, लाइन-एप जैसे स्मार्ट

फोन एप्लिकेशंस, मैसेंजर एप्लिकेशंस और सोशल नेटवर्किंग साइट्स के इस्तेमाल पर भी पूरी तरह पाबंदी लगा दी. सेना की तीनों इकाइयों के सैनिकों, जूनियर कमीशंड अफसरों और कमीशंड अफसरों से कहा गया कि वे अपना ई-मेल आईडी भी तत्काल प्रभाव से बदल लें. फिर भी केंद्र सरकार बेशर्मी की चादर ओढ़े रही. सरकार को शाओमी फोन्स के बड़े-बड़े विज्ञापन नजर नहीं आते. चीनी स्मार्ट फोन्स और एप्लिकेशंस के जरिए यूज़र का पूरा डाटा पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी को मुहैया कराया जा रहा था. स्मैश-एप का सर्वर जर्मनी में था, जिसे कराची का रहने वाला पाकिस्तानी एजेंट साजिद राना पीबीएक्समोबीफ्लेक्स.कॉम के नाम से चला रहा था. इस एप्लिकेशन की तकनीक चीन द्वारा विकसित की गई थी. इसे इतने शातिराना तरीके से तैयार किया गया था कि उसे डाउनलोड करते ही यूज़र के फोन में दर्ज सारे डीटेल्स, एसएमएस रिकॉर्ड, फोटो, वीडियो और यहां तक कि

चीन के बने मोबाइल फोन्स की करतूतों पर भारत सरकार को चुप्पी साधे देख आखिरकार भारतीय सेना की तीनों इकाइयों ने स्मार्ट फोन्स के इस्तेमाल पर ही पाबंदी लगा दी. भारतवर्ष की लचर साइबर सुरक्षा व्यवस्था का खामियाजा आखिरकार सेना को ही भुगतना पड़ा. थलसेना, वायुसेना और नौसेना में स्मार्ट फोन्स के इस्तेमाल पर रोक के साथ-साथ फेसबुक, ट्विटर, व्हाट्सएप, स्मैश-एप, वी-चैट, लाइन-एप जैसे स्मार्ट फोन एप्लिकेशंस, मैसेंजर एप्लिकेशंस और सोशल नेटवर्किंग साइट्स के इस्तेमाल पर भी पूरी तरह पाबंदी लगा दी.

चौथी दुनिया
बेहोश प्रधानमंत्री!
भारत सरकार की जासूसी
साल का पहला बड़ा खुलासा

देश दुनिया
बेहोश प्रधानमंत्री!
भारत सरकार की जासूसी
चौथी दुनिया

अप्रैल 2016 में ही 'चौथी दुनिया' ने चीनी संचार कंपनियों से भारत की सैन्य व्यवस्था को पहुंच रहे खतरे के बारे में आगाह किया था

अरुणाचल में फिर शुरू होगा भारत-अमेरिका का साझा अभियान, फिर खीझेगा चीन

दलाईलामा की अरुणाचल यात्रा से बौखलाए चीन के लिए और खीझने का समय आ रहा है, क्योंकि अरुणाचल प्रदेश में दूसरे विश्व युद्ध के दौरान लापता हुए चार सौ अमेरिकी वायु सैनिकों के शवों की खोजबीन का साझा अभियान जल्दी ही शुरू किए जाने की सुगबुगाहट है. सेना खुफिया एजेंसी के एक अफसर ने कहा कि लापता अमेरिकी सैनिकों के शव तलाशने का काम 2010 और 2011 में भी होना था, लेकिन अरुणाचल प्रदेश को लेकर चीन के विरोध के कारण तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने अभियान स्थगित कर दिया था. लेकिन अब डोनाल्ड ट्रंप अमेरिका के राष्ट्रपति हैं और अपने मसलों पर अड़ियल रुख रखने वाले माने जाते हैं. अब ट्रंप के कार्यकाल में उस अभियान को फिर से शुरू करने की पहल हो रही है, इस अभियान में भारतीय सैनिक भी शामिल रहेंगे. 400 अमेरिकी वायु सैनिक दूसरे विश्व युद्ध में असम और चीन के कनमिंग के बीच लॉजिस्टिक्स सप्लाई ऑपरेशन के दौरान विभिन्न हवाई दुर्घटनाओं में मारे गए थे. दूसरे विश्व युद्ध में चीन, भारत और बर्मा क्षेत्र सक्रिय 'वार-जोन' में था. युद्ध के दौरान कम से कम 500 वायुयान लापता हो गए थे, जिनका कुछ पता नहीं चल पाया. अमेरिका के खोजी क्लेयटन कुहेल्स ने वर्ष 2006 में इटानगर के उत्तर, वेलांग के दक्षिण, ऊपरी सियांग और कुछ अन्य जगहों पर करीब 19 विमानों के अवशेष पाए थे. युद्ध के दौरान जो अमेरिकी सैनिक मारे गए थे, उनके परिवार के दबाव पर सैनिकों के अवशेष खोजने के लिए भारत और अमेरिका ने 2008 के अंत में ही संयुक्त तलाशी अभियान शुरू किया था. फिर अभियान बंद हो गया और ओबामा प्रशासन ने उसे स्थगित कर दिया. चीनी घुड़कियों के कारण अरुणाचल प्रदेश में भारत और अमेरिकी सेना का साझा सैन्य अभ्यास भी नहीं हो पाया था. लेकिन अब इसे फिर से आयोजित करने की पहल हो रही है. अरुणाचल प्रदेश में भारत, अमेरिका, जापान, ऑस्ट्रेलिया और सिंगापुर का साझा सैन्य प्रशिक्षण का कार्यक्रम भी पाइप-लाइन में है. ■

उत्तराखंड में भी चीन ढूंढ़ रहा दरार

दलाईलामा के अरुणाचल प्रदेश आगमन के दौरान या उनके स्वागत की तैयारियों के दौरान सीमाक्षेत्र पर चीनी सेना की सक्रियता दिखावा थी. असल में उसकी आड़ में वह बर्मा के रास्ते भारत में घुसने की तैयारी में था. इधर, उत्तराखंड भी चीनी घुसपैठ का आसान रास्ता बन रहा है. पिछले साल 19 जुलाई को उत्तराखंड के चमोली जिले में चीनी सेना की घुसपैठ की खबर आई थी. उत्तराखंड के तत्कालीन मुख्यमंत्री हरीश रावत ने भी कहा था कि उत्तराखंड की सीमा पर चीन की सक्रियता काफी बढ़ गई है. इस बारे में केंद्र सरकार को औपचारिक जानकारी भी दे दी गई थी. सेना का कहना है कि चमोली जिले के बाराहोटी इलाके में चीनी सेना ने घुसपैठ की थी. चमोली के भी 80 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर चीन अपना दावा करता है. दो वर्ष पहले चीनी सेना का हेलीकॉप्टर भी भारतीय वायुसीमा का अतिक्रमण कर चुका है. वर्ष 2013-14 में भी कई बार चीनी सैनिक चमोली में घुस कर पत्थरों पर चीन लिखकर चले गए थे. उत्तराखंड की करीब 350 किलोमीटर की सीमा चीन से मिलती है, लेकिन इसका औपचारिक सीमांकन अब तक नहीं हो पाया है. ■

किन-किन लोगों से उसकी बातें हो रही हैं, उसका ब्यौरा भी सर्वर को मिल जाता था. इसी तरह शाओमी और रेडमी फोन्स द्वारा भी यूज़र-डाटा चीन में स्थापित सर्वर्स को भेजे जा रहे थे. स्मार्ट फोन के स्मार्ट एप्लिकेशन के इस्तेमाल से सेना के कर्मचारी या अफसर अनजाने में ही खुद ब खुद जासूसी के 'टूल' के रूप में इस्तेमाल हो रहे थे. सेना के सामान्य अफसर या सैनिक तकनीकी तौर पर विशेषज्ञ नहीं होते, लिहाजा वे समझ नहीं पा रहे थे कि उनकी सूचनाएं किस तरह बाहर लीक हो रही थीं. भारतीय सेना के डायरेक्टर जनरल (मिलिट्री ऑपरेशंस) ने सेना के सारे कमानों को बाकायदा यह निर्देश दिया कि सैनिक (अफसर और जवान) या उनके परिवार के कोई भी सदस्य वी-चैट जैसे एप्लिकेशन का इस्तेमाल न करें. इस निर्देश में उन सारे एप्लिकेशंस का प्रयोग न करने की हिदायत दी गई, जिसके सर्वर विदेश में हों. सेना मुख्यालय ने आधिकारिक तौर पर माना कि चीन के टेलीकॉम ऑपरेटर्स वी-चैट जैसे एप्लिकेशंस के जरिए सूचनाएं हासिल कर उसे चीन सरकार को दे रहे हैं. इंडियन कम्प्यूटर इमरजेंसी रेसपॉन्स टीम से मिली जानकारियों के आधार पर भारतीय वायुसेना की खुफिया शाखा ने भी यह रिपोर्ट केंद्र सरकार को दे रखी है कि शाओमी और रेडमी स्मार्ट फोन्स अपने सारे यूज़र डाटा चीन में बैठे आकाओं को मुहैया करा रहे थे. रेडमी फोन के चीन स्थित आईपी एड्रेस से कनेक्ट होने के भी कई प्रमाण सामने आए. तब यह बात खुली कि सर्वर (डब्लूडब्लूडब्लू.सीएनएनआईसी.सीएन) का मालिक चीन सरकार का सूचना उद्योग मंत्रालय खुद है. रिसर्च एंड अनालिसिस विंग (रॉ) के अधिकारी बताते हैं कि हचिसन-वैमपोआ और शाओमी काफी करीब हैं और एशिया में साझा कारोबार करते हैं. हच के नाम से भारत में हचिसन का कारोबार था, लेकिन उसने भारत में व्यापार का अधिकार वोडाफोन को बेच डाला. भारत सरकार ने कभी इस बात की छानबीन नहीं कराई कि संचार का सहारा लेकर हचिसन कंपनी भारत में क्या-क्या धंधे करती रही और अचानक काम समेट कर क्यों चली गई. हचिसन कंपनी अरबों रुपए का कैपिटल गेन टैक्स हड़प कर चली गई, इस पर किसी को कोई दर्द ही नहीं हुआ. हचिसन-वैमपोआ के मालिक ली का शिंग के चीन की सत्ता और चीन की सेना (पीएलए) से गहरे सम्बन्ध हैं. ली का शिंग की कंपनी हचिसन-वैमपोआ चीनी सेना की साइबर रेजिमेंट के साथ मिल कर साइबर वारफेयर और साइबर जासूसी के क्षेत्र में काम करती है. चीन के कम्युनिज्म का सच यही है कि चीन की सेना दुनियाभर में फैली कई नामी कॉरपोरेट कंपनियों की

(शेष पृष्ठ 4 पर)

सैन्य संचार-तंत्र भारत का

क़ब्ज़ा चीन का!

पृष्ठ 3 का शेष

मालिक है या हचिसन-वैमपोआ जैसे कॉरपोरेट घरानों के साथ मिल कर काम करती है. इस तरह चीन की सेना दुनियाभर में जासूसी भी करती है और धन भी कमाती है. हचिसन-वैमपोआ और चीन की सेना ने पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका समेत दुनिया के तमाम देशों के बंदरगाहों को अपने हाथ में ले रखा है. बंदरगाहों का काम हचिसन पोर्ट होल्डिंग (एचपीएच) के नाम से किया जा रहा है. बंदरगाहों के जरिए हथियारों की आमद-रफ्त बेधड़क तरीके से होती रहती है. हचिसन-वैमपोआ लिमिटेड के चेयरमैन ली का शिंग चीन की सेना के लिए बड़े कारोबार में बिचौलिए की भूमिका भी अदा करते हैं. अमेरिका की ह्यूज़ कॉरपोरेशन और चाइना-हॉन्गकॉन्ग सैटेलाइट (चाइनासैट) के बीच हुए कई बड़े सैटेलाइट करारों में ली का शिंग अहम भूमिका अदा कर चुके हैं. यहां तक कि ली ने चाइनासैट और एशियासैट में अपना धन भी लगाया. चाइनासैट और एशियासैट कंपनियां चीनी सेना पीपुल्स लिबरेशन आर्मी की कंपनियां हैं. इसी तरह चाइना ओसियन शिपिंग कंपनी (कॉसको) भी पीपुल्स लिबरेशन आर्मी की है, जिसमें हचिसन-वैमपोआ लिमिटेड का धन लगा हुआ है. लीबिया, ईरान, इराक और पाकिस्तान समेत कई देशों में आधुनिक हथियारों की तस्करी में कॉसको की लिप्तता कई बार उजागर हो चुकी है. कुख्यात आर्म्स डीलर और अत्याधुनिक हथियार बनाने वाली चीन की पॉलीटेक्नोलॉजीज़ कंपनी के मालिक वांग जुन और हचिसन-वैमपोआ के मालिक ली का शिंग के नजदीकी सम्बंध हैं. पॉलीटेक्नोलॉजीज़ कंपनी का संचालन भी पीएलए द्वारा ही होता है. चीन के प्रतिष्ठित द चाइना इंटरनेशनल ट्रस्ट एंड इन्वेस्टमेंट कॉरपोरेशन में वांग जुन और ली का शिंग, ये दोनों कुख्यात हस्तियां बोर्ड मेम्बर्स हैं.

देश के संचार-तंत्र को सड़ा चुका है चीन का साइबर दीमक

चीन के उपकरणों पर ज़रूरत से ज़्यादा निर्भरता भारत के लिए बड़ी आपदा को न्यौता दे रही है. रणनीतिक विशेषज्ञ इस बात को लेकर चिंतित रहे हैं कि दूरसंचार क्षेत्र में हो रहा चीनी अतिक्रमण चीनी सेना की सोची-समझी रणनीति है. देश में अधिकांश बेस ट्रांसमिशन स्टेशन (बीटीएस) में चीनी कंपनियों हुआवेई और जेडटीई के हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर का इस्तेमाल हुआ है. सबसे बड़ा खतरा यह है कि सभी चीनी बीटीएस को जीपीएस सिग्नल के लिए चीनी उपग्रहों पर स्थानांतरित कर दिया गया है. यह खतरनाक है, क्योंकि मोबाइल बीटीएस के जीपीएस मॉड्यूल में बदलाव करने से पूरा का पूरा कम्युनिकेशन सिस्टम ढह सकता है. किसी आपात स्थिति में जीपीएस पल्स को ब्लॉक किया जा सकता है. यहां तक कि इसके रास्ते में बदलाव करके इसकी टाइमिंग बदली जा सकती है. देश का 60 प्रतिशत सीडीएमए और जीएसएम मोबाइल कम्युनिकेशन चीनी वेंडर्स ही चलाते हैं. इसलिए 60 प्रतिशत मोबाइल नेटवर्क पर सीधा खतरा है. यदि एक बार यह धराशाई हो गया, तो बाकी 40 प्रतिशत पर इसका बोझ पड़ेगा. इस वजह से सारा मोबाइल कम्युनिकेशन नेटवर्क ठप्प पड़ जाएगा. सरकार के पास इससे उबरने का कोई वैकल्पिक रास्ता नहीं है. यानि, देश के जीपीएस नेटवर्क में थोड़ी सी भी खराबी आती है, तो सारे कम्युनिकेशन नेटवर्क का अचानक भट्ठा बैठ जाएगा.

1963 में ही सीआईए ने कहा था, चीन का अगला हमला वाया बर्मा

अमेरिकी खुफिया एजेंसी सीआईए ने 1962 के युद्ध के बाद ही यह कह दिया था कि भविष्य में चीन बर्मा (म्यांमार) के रास्ते भारत पर हमला करेगा. आज सीआईए की वह रिपोर्ट सच साबित हो रही है. सीआईए ने यह भी कहा था कि चीन अगले युद्ध का मुहाना बर्मा, तिब्बत और नेपाल के रास्ते खोलेगा. आप जानते हैं कि अक्टूबर 1962 में चीन ने लद्दाख और नेफा (नॉर्थ ईस्ट फ्रंटियर एजेंसी), जो आज अरुणाचल प्रदेश है, के रास्ते भारत में घुसपैठ की थी और एक महीने के बाद ही एकतरफा युद्ध विराम की घोषणा कर दी थी. जनवरी 1963 में अमेरिकी खुफिया एजेंसी सीआईए ने चीन की धूर्तता के सारे आयामों की सूक्ष्मता से जांच-पड़ताल की थी.

मई 1963 में सेंट्रल इंटेलिजेंस एजेंसी (सीआईए) और यूएसआईबी (यूनाइटेड स्टेट इंटेलिजेंस बोर्ड) की साझा गोपनीय रिपोर्ट में बताया गया था कि चीन बर्मा की तरफ से हमला करेगा और बर्मा उससे इन्कार नहीं कर पाएगा, यहां तक कि बर्मा की रजामंदी से चीनी सैनिक बर्मा के एयरफील्ड और परिवहन व्यवस्था का भी इस्तेमाल करेंगे. सीआईए ने बर्मा के रास्ते होने वाले संभावित हमले के रूट भी बताए थे और कहा था कि चीनी सैनिक कुनमिंग-डिब्रूगढ़ रोड पर लेडो से और कुनमिंग-तेजपुर रोड पर मंडाले और इंफ्फल के रास्ते प्रवेश करेंगे. हालांकि सीआईए रिपोर्ट में यह भी कहा गया था कि भारत पर चीन की तरफ से हवाई हमले का खतरा उतना नहीं होगा, क्योंकि हिमालयन रेंज में चीन के समुचित एयर बेस नहीं हैं. सीआईए के तत्कालीन डिप्टी डायरेक्टर रे क्लाइन ने उस समय के अमेरिकी राष्ट्रपति और भारत के मित्र रहे जॉन एफ कैनेडी के विशेष सचिव मैकजॉर्ज बंडी को यह रिपोर्ट सौंपी थी और भारत के खिलाफ चीन के षडयंत्रों का विस्तृत ब्यौरा पेश किया था. 55 साल बाद आज सीआईए की उस रिपोर्ट का औचित्य और उसकी प्रासंगिकता समझ में आ रही है.

भारतीय सेना को ब्रह्मोस के ब्रह्मास्त्र का भरोसा

चीन के कारण अरुणाचल प्रदेश की शांत सुंदर वादियों में भारतीय सेना को ब्रह्मोस जैसी खतरनाक सु-परसोनिक क्रूज़ मिसाइलें तैनात करनी पड़ रही हैं. केंद्र की मंजूरी के बाद भारतीय सेना के 40वीं आर्टिलरी डिवीजन के 864 रेजीमेंट ने अरुणाचल प्रदेश के तवांग से लेकर विजयनगर क्षेत्र तक ब्रह्मोस ब्लॉक-3 क्रूज मिसाइलें तैनात करने का काम तेज कर दिया है. आठ मई 2015 को ब्रह्मोस मिसाइल के कामयाब परीक्षण के बाद वर्ष 2016 में ही केंद्र सरकार ने इसकी तैनाती की मंजूरी दे दी थी. यह मिसाइल पर्वत क्षेत्र में युद्ध के लिए सटीक मार करने वाली मिसाइल मानी जाती है. ब्रह्मोस को चीन के डॉन्गफेंग-21डी बैलिस्टिक मिसाइल की कारगर काट माना जाता है. ब्रह्मोस मिसाइल की कारगर मारक क्षमता पांच सौ किलोमीटर तक है, लेकिन 'मिसाइल टेक्नोलॉजी कंट्रोल रेजीम' (एमटीसीआर) संधि के कारण इसकी मारक क्षमता को 290 किलोमीटर तक बांधा गया है. विडंबना यह है कि एमटीसीआर संधि से जुड़े 35 देशों में भारत शामिल है, लेकिन चीन इसमें शामिल नहीं है.

पूर्वोत्तर का विकास सबसे अहम

सुरक्षा संवेदनशीलता को देखते हुए पूर्वोत्तर का समग्र विकास अत्यंत जरूरी है. अब तक की सरकारों ने पूर्वोत्तर को शेष भारत के साथ समाहित करने के बारे में गंभीरता से कभी ध्यान ही नहीं दिया. सेना की पूर्वी कमान में तैनात पूर्वोत्तर मामलों के विशेषज्ञ माने जाने वाले एक वरिष्ठ सेनाधिकारी ने यह चिंता जताई कि भारत सरकार ने गंभीरता से इस ओर ध्यान नहीं दिया तो पूर्वोत्तर भी कश्मीर बन जाएगा. इस क्षेत्र की सीमाएं चीन, म्यांमार, भूटान, बांग्लादेश और नेपाल से मिलती हैं, इसलिए यह अधिक संवेदनशील है. हालांकि उन्होंने यह भी माना कि अब पूर्वोत्तर को लेकर सरकार की सोच और समझदारी में बदलाव आया है. लेकिन इस ओर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है. केंद्र सरकार को पूर्वोत्तर के गंभीर भू-सामरिक (जीओ-स्ट्रैटेजिक) महत्व को समझना चाहिए और उस अनुरूप सारे दृष्टिकोणों से काम होना चाहिए. पूर्वोत्तर के लोगों में अलग-थलग पड़ने की भावना गहरा रही थी, उसमें थोड़ी कमी आई है. लेकिन पूर्वोत्तर के लोगों के साथ शेष भारत में भेदभाव, पक्षपात, अन्याय, आर्थिक उपेक्षा, पहचान की समस्या, नस्ली हिंसा जैसी मुश्किलें न खड़ी हों, इसकी कारगर व्यवस्था की तरफ केंद्र सरकार उतना ध्यान नहीं दे रही है. पूर्वोत्तर के युवाओं को रोजगार के अवसर नहीं मिल रहे. दूसरी तरफ क्षेत्र में विकास और संरचनात्मक विकास का अभाव उनमें असंतोष पैदा करता है. यही असंतोष उग्रवादी समूहों और हिंसक जातीय गुटों में परिवर्तित हो जाता है. पूर्वोत्तर को लेकर हुए एक अध्ययन के मुताबिक खास तौर पर असम को अवैध आप्रवासियों ने बहुत नुकसान पहुंचाया है. राज्य के 27 जिलों में से नौ जिले अवैध आप्रवासियों के वर्चस्व में हैं. विधानसभा की 126 सीटों में से 60 सीटों पर उनका प्रभुत्व कायम हो गया है. राज्य की वन्य भूमि पर किए गए अतिक्रमण में 85 प्रतिशत बांग्लादेशियों की भागीदारी है. जनसंख्या में अस्वाभाविक वृद्धि अवैध आप्रवास के कारण हुई है. नगालैंड में भी बांग्लादेशी आप्रवासियों की तादाद बेतहाशा बढ़ी है. इससे स्थानीय लोगों में भय बढ़ा है और असुरक्षा के कारण गिरोहबंदी बढ़ी है. त्रिपुरा भी इसका उदाहरण है, जहां बांग्लादेशी शरणार्थियों के कारण त्रिपुरा के मूल लोगों की स्थानीय पहचान मिट गई. इसी का परिणाम है कि सैकड़ों उग्रवादी संगठन अस्तित्व में आ गए. मिजोरम में भी बाहरी-विरोधी भावनाएं विभिन्न छात्र आंदोलनों के रूप में दिखाई देती हैं. नगा लोग नगालिम के गठन के लिए असम और मणिपुर के क्षेत्रों को शामिल करने की मांग कर रहे हैं. मणिपुर की इरोम शर्मीला 17 साल तक भूख हड़ताल करती रहीं. पूर्वोत्तर के लोगों में सशस्त्र बलों के प्रति भी आक्रोश है. पूर्वोत्तर के लोग राजनीतिक उपेक्षा से परेशान हैं. पूर्वोत्तर में संसदीय सीटें बढ़नी चाहिए और विधानसभाओं में भी जन-प्रतिनिधित्व बढ़ाने पर काम होना चाहिए.

अरुणाचल प्रदेश भारत-चीन विवाद में ही उलझा हुआ है. जबकि केंद्र सरकार को अरुणाचल प्रदेश के समग्र विकास पर ध्यान देना चाहिए. केवल अपना बताने से काम नहीं चलता, उसे विकास और समृद्धि के जरिए अपना बनना चाहिए. अरुणाचल में जल विद्युत और खनिज संपदा की अपार संभावनाएं हैं. चीन ने अरुणाचल राज्य की सीमा से लगे अपने इलाके में अनेक शहर बसाए हैं. वे इतने विकसित हैं कि अरुणाचल के लोगों को वे चीनी शहर लुभाते हैं. यह हकीकत है. पूर्वोत्तर को भारत विरोधी संगठन भी अपना अड्डा मानते हैं. पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी पूर्वोत्तर को अपना सुरक्षित ठिकाना मानती है. भारत और बांग्लादेश के बीच 4096 किलोमीटर लम्बी सीमा पर सुरक्षा का कोई पुख्ता इंतजाम नहीं है. इस वजह से भारतीय क्षेत्र में जनसंख्या का स्वरूप ही बदलता चला जा रहा है. ■

भारतीय नौसेना के 10 युद्धपोतों पर ब्रह्मोस मिसाइलें तैनात कर दी गई हैं. अन्य युद्धपोतों पर इस मिसाइल सिस्टम को सुसज्जित करने का काम चल रहा है. वायुसेना के सुखोई-30 विमानों को ब्रह्मोस मिसाइलें फायर करने में सक्षम बनाने का काम अब पूरा होने वाला है. अरुणाचल प्रदेश के तेजपुर स्थित वायुसेना बेस पर ब्रह्मोस मिसाइलों से सुसज्जित सुखोई-30 विमानों के दो स्क्वाड्रन तैयार रहेंगे. उधर, चीन भी अपनी सामरिक तैयारियों में जुटा हुआ है. चीन ने इसी महीने विमानवाही युद्धपोत सीवी-17 शानडॉन्ग को चीनी नौसेना को सुपुर्द किया. 23 अप्रैल को चीनी नौसेना के 68वें सालगिरह पर उसे यह तोहफा दिया गया.

ल्हासा से नेपाल के रास्ते भारत को घेरेगा चीन

चीन नेपाल के रास्ते से भी भारत को घेरने की तैयारी लंबे अर्से से कर रहा है. चीन से नेपाल तक हिमालय को काटकर बनाए गए 'द फ्रेंडशिप हाइ-वे' ने चीनी सेना के लिए रास्ता आसान कर दिया है. अब चीन से नेपाल तक हिमालय के अंदर सुरंग खोद कर रेलवे लाइन बिछाने का काम चल रहा है. 'द फ्रेंडशिप हाइ-वे' तिब्बत के ल्हासा से हिमालय के बीच से होता हुआ झांगमू और नेपाल के कोडारी तक पहुंचता है. सामरिक और रणनीतिक दृष्टि से बनाई गई यह सड़क हिमालय से भारत की तरफ बहने वाली सारी प्रमुख नदियों गंगा, ब्रह्मपुत्र, सिंधु, अरुण, कोशी और यहां तक कि हिमालय पर्वत श्रृंखला की पवित्र चोटी कैलाश और पवित्र मानसरोवर झील को छूती और काटती हुई चलती है. नेपाल के कोडारी तक आने वाली यह सड़क आगे भी अरनिको राजमार्ग के नाम से काठमांडू तक पहुंचती है. हिमालय को काट-काट कर बनाया गया यह हाई-वे 5,476 किलोमीटर यानि 3,403 मील का रास्ता तय करता है.

भारत पर हमले के एक साल पहले ही, यानि, 1961 से ही चीन हिमालय के इस क्षेत्र को काटकर सड़क ले जाने की कोशिश में लगा था. भारत-चीन युद्ध के एक साल बाद 1963 में चीन ने काठमांडू-कोडारी रोड बनाना शुरू कर दिया और 1967 में इसे आवागमन के लिए खोल भी दिया. चीन ने नेपाल से लगी अपनी सीमा पर कहीं भी सुरक्षा चौकी नहीं रखी है, केवल कोडारी रोड पर चीन का एक चेक-पोस्ट बना है. अब इसी रूट पर चीन ल्हासा से खासा (नेपाल सीमा पर स्थित) तक और काठमांडू तक रेलवे लाइन का निर्माण कर रहा है. वर्ष 2020 तक यह पूरा हो जाएगा. ■

पाकिस्तान के लिए चीनी सैनिक बना रहे बंकर

बाड़मेड़ सेक्टर में पाकिस्तानी सीमा की तरफ से जो पुख्ता बंकर बन रहे हैं, वे चीनी सैनिकों द्वारा बनाए जा रहे हैं. चीन के विशेषज्ञ सैनिकों की मदद से ही लंबे सीमा क्षेत्र में पाकिस्तान बंकरों का जाल बिछा रहा है. भारतीय सेना का कहना है कि पाकिस्तान की तरफ ठोस बंकरों के अलावा हथियारों के कोत, हेलीपैड, पक्की सड़कें, पानी टंकियां, चौकियां और दूसरे कई ढांचे तैयार किए जा रहे हैं. जैसलमेर के किशनगढ़ बल्ज और शाहगढ़ बल्ज क्षेत्र के सामने सीमा पार डेटका टोबा, हरंगवाला, सखीरेवालाखु, डंगाऊ तक, बचोल, जमेश्वरी, चुरुनपढ़, कुल फकीर इलाकों में पक्के बंकर बनते देखे गए हैं. सेना ने दूरबीन कैमरे से उन बंकरों की तस्वीरें भी खींची हैं. तस्वीरों में चीनी सैनिकों को काम करते और कराते देखा जा सकता है. ■

feedback@chauthiduniya.com

सोनशी-लौह खनन

गोवा की सतरंगी दुनिया की बदरंग तस्वीर

निरंजन मिश्रा

विडंबना है कि जिस खनन उद्योग को कभी भ्रष्टाचार के सवाल पर बंद किया गया था, आज उसी खनन पर स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ करने का आरोप लगाने वाले लोगों को जेलों में बंद किया जा रहा है. गोवा के सोनशी में खनन कार्य में लगे ट्रकों का रास्ता रोकने के जुर्म में प्रशासन ने 45 लोगों को जेलों में बंद कर दिया. पहले तो वे जमानत के बाद भी रिहा हो नहीं सके, क्योंकि उन्हें 10,000 का निजी मुचलका भरना था. लेकिन बाद में उनकी रिहाई हुई. इस घटना के बाद से स्थानीय लोगों में खनन कम्पनियों के साथ-साथ अब प्रशासन को लेकर भी उबाल है. खनन के कारण इन लोगों के रोजगार छिन गए, बच्चों की पढ़ाई बाधित हो रही है, लौह अयस्क कणों से भरे धूल उड़ाने वाले ट्रकों ने इन्हें बीमार कर दिया और अब तो पीने के पानी का भी संकट खड़ा हो रहा है. कभी धान की खेती और बागबानी के कारण गुलजार रहने वाले सोनशी के घर अब पूरे दिन धूल से भरे रहते हैं, जिसके कारण लोग अब यहां से पलायन का भी मन बनाने लगे हैं. इनका कहना है कि हमारी परेशानियां सुनने और उनका समाधान करने की बजाय सवाल पूछने और विरोध करने पर उल्टा हमें ही जेलों में बंद कर दिया जा रहा है.

पणजी से 57 किमी की दूरी पर स्थित वालपोई जिले के सत्तारी तालुका का सोनशी गांव कभी अपनी बागवानी के लिए जाना जाता था, लेकिन आज इसकी पहचान ये है कि ये गांव 6 लौह अयस्क की खानों से घिरा हुआ है. लौह अयस्क की इन 6 खानों ने ही यहां के लोगों की जिंदगी दूभर कर दी है. वेदांता और फोमेंटो कम्पनियों द्वारा यहां पर किए जा रहे खनन कार्यों में लगभग 1,200 ट्रक नियमित रूप से लौह अयस्कों की ढुलाई करते हैं. स्थानीय लोगों का कहना है कि हर ट्रक प्रतिदिन 6-7 बार आता-जाता है. इतना ही नहीं, लगभग 10 टन लौह अयस्क से भरा ट्रक हर तीन सेकेंड के अंतराल पर इस गांव से गुजरता है. ये खनन कार्य लोगों के स्वास्थ्य के साथ भी बुरी तरह से खिलवाड़ कर रहे हैं. सिर्फ सोनशी ही नहीं आस-पास के अन्य गांव भी खनन से बुरी तरह से प्रभावित हैं. यहां कई स्पंज आयरन प्लांट लगे हुए हैं, जिनसे निकला कचड़ा गांवों में ही जमा किया जाता है. ये कचड़े जल स्त्रोतों को जहरीला बनाते हैं. स्वास्थ्य के लिए ये कितने हानिकारक हैं, इसे सब बात से समझा जा सकता है कि पर्यावरण मंत्रालय ने स्पंज आयरन कम्पनियों को प्रदूषण के मामले में रेड कैटेगरी में रखा है.

ऐसे तो 1999 से ही सोनशी में खनन कार्य हो रहा है, लेकिन 2007 में एक खान में हुए विस्फोट के बाद से हालात और खराब हो गए. सोनशी के लोगों का कहना है कि वो हमारे लिए बहुत अच्छा समय था, जब भ्रष्टाचार के मामले को लेकर यहां खनन कार्य बंद था. लेकिन अब फिर से हमारे लिए यहां नारकीय स्थिति हो गई है. लोगों का कहना है कि हमने शुरू से ही इस खनन के खिलाफ आवाज उठाई है, लेकिन हमारी परेशानी सुनने की जगह, हम पर ही कार्रवाई कर दी जाती है. ट्रकों का रास्ता रोकने पर 11 अप्रैल को हुई 45 लोगों की गिरफ्तारी नई बात नहीं है. फरवरी 2016 में भी यहां के लोगों ने प्रशासन के समक्ष बड़े स्तर पर आवाज उठाई थी. इन्होंने मांग की थी कि इन्हें शुद्ध पीने का पानी, रोजगार, बच्चों के लिए स्कूल और खेल के मैदान जैसी सुविधाएं मुहैया कराई जाय और ट्रकों की आवाजाही से होने वाली परेशानियों को दूर किया जाय. लेकिन तब भी इनकी बात नहीं सुनी गई. एक महीने बाद ही मार्च में 100 लोगों को गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया गया था. ये लोग ट्रकों का रास्ता रोक रहे थे. इस साल 27 जनवरी को भी लोगों ने अपने गांव से ट्रकों की आवाजाही का विरोध किया था. ■

feedback@chauthiduniya.com

लोक ही नहीं तंत्र को भी खोखला करता रहा है अवैध खनन

खनन उद्योग का देश की अर्थव्यवस्था में एक बड़ा योगदान है. लेकिन देश भर में चल रहे खनन कार्यों में से अधिकतर पर भ्रष्टाचार को लेकर सवाल उठते रहे हैं. गोवा में चल रहा खनन कार्य भी इससे अलग नहीं है. यहां तो भ्रष्टाचार के सवाल को लेकर ही पूरे राज्य में खनन कार्यों पर प्रतिबंध लगाया जा चुका है. सितंबर 2012 में आई शाह कमीशन की रिपोर्ट में ये खुलासा हुआ था कि भ्रष्टाचार का अखाड़ा बन चुके खनन में 35,000 करोड़ का घोटाला हुआ है. इस रिपोर्ट के आने के महज तीन दिन बाद ही गोवा सरकार ने राज्य में खनन पर रोक लगा दिया था. इसके अगले ही महीने सुप्रीम कोर्ट ने भी राज्य में चल रही सभी खनन गतिविधियों के साथ-साथ लौह अयस्कों के आयात-निर्यात को राज्य में पूर्ण रूप से प्रतिबंधित कर दिया. हालांकि अप्रैल 2014 में ही सुप्रीम कोर्ट ने खनन कार्यों को फिर से बहाल कर दिया. खनन कार्यों से प्रतिबंध हटाते हुए कोर्ट ने खनन की सीमा तय की थी और कहा था कि प्रति वर्ष 20 मिलियन टन से ज्यादा लौह अयस्कों का खनन नहीं होना चाहिए. लेकिन स्थानीय स्तर पर अवैध खनन के खिलाफ आवाज उठाने वाले लोगों की मानें, तो गोवा में खनन माफिया खनन को लेकर अदालत द्वारा तय की गई इस सीमा का सरेआम उल्लंघन कर रहे हैं. ■

खनन ने उद्यमी से मज़दूर बना दिया

सोनशी गांव में धान की खेती और बागवानी बड़े स्तर पर होती रही है. यहां के लोग सुपारी, नारीयल और मशाले पैदा करने से लेकर उससे संबंधित उद्योमों से भी जुड़े रहे हैं. लेकिन खनन के कारण अब यहां खेती खत्म होती जा रही है. खनन से यहां की जमीनें बंजर हो रही हैं और साथ ही सिंचाई के स्त्रोत भी खत्म होते जा रहे हैं. सोनशी की बागवानी कभी पूरे गोवा में मशहूर थी, लेकिन खनन ने आज इसकी पहचान बदलकर रख दी है. अब चारो तरफ धुंध और धुल का ही कब्जा है. जो लोग कल तक खेती कर रहे थे या खेती के सहारे अपने उद्योग-धंधे चला रहे थे, उन्हें आज उसी खनन कार्य में दिहाड़ी मजदूर के तौर पर काम करना पड़ रहा है. अगर खनन कम्पनियों की तरफ से इन्हें समानजनक वेतन वाली कोई स्थाई नौकरी मिल जाती है, तो इनके लिए राहत होगी, लेकिन अभी इसकी संभावना नजर नहीं आ रही है. ■

झीरमघाटी हमले को लेकर कांग्रेस का भाजपा पर निशाना

नक्सली हिंसा पर सियासी रण

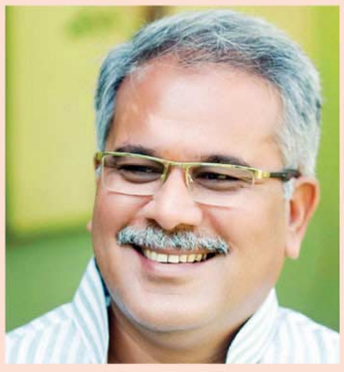

चौथी दुनिया ब्यूरो

देश की राजनीति के अलग-अलग खेमे अलग-अलग मुद्दों पर हर दिन नए तेवर में एक दूसरे से आमना-सामना करते हुए दिख रहे हैं, लेकिन छत्तीसगढ़ में सत्तारूढ़ दल और विपक्षी पार्टी के बीच एक पुरानी घटना को लेकर आरोपों-प्रत्यारापों का दौर जारी है. हालांकि बात सिर्फ आरोपों-प्रत्यारोपों तक सीमित नहीं है, क्योंकि जिस घटना को लेकर बयानबाजी शुरू है, उसमें कई बड़े नेताओं की नृशंस हत्या हुई थी. दरअसल, प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष भूपेश बघेल ने झीरमघाटी में नक्सलियों के हाथो हुई कांग्रेसी नेताओं की हत्या के मामले में सरकार और नक्सलियों के बीच सांठगांठ का आरोप लगाया है. हालांकि रमन सिंह ने इन आरोपों को बेबुनियाद बताया है और कहा है कि कांग्रेस की हिम्मत नहीं है कि वे प्रमाण के तौर पर एनआईए के सामने एक पर्ची दे सकें, सिर्फ मीडिया में हिम्मत दिखाने से कोई फर्क नहीं पड़ेगा.

भूपेश बघेल ने आरोप लगाया है कि झीरमकांड से ठीक पहले सरकार की ओर से किसी व्यक्ति के माध्यम से नक्सलियों को करोड़ों रुपए की रकम पहुंचाई गई थी. उन्होंने कहा कि आईएएस एलेक्स पॉल मेनन की अचानक हुई रिहाई के बाद स्व. कांग्रेस नेता महेन्द्र कर्मा ने भी सवाल खड़े किए थे और आरोप लगाया था कि सरकार की ओर से इस मामलों में पैसों का लेनदेन हुआ है. प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष ने एक पूर्व पुलिस सहयोगी अभय सिंह को आधार बनाते हुए ये आरोप लगाया है. गौरतलब है कि अभय सिंह ने 18 अप्रैल 2013 को बिलासपुर में एक पत्रकार वार्ता में पुलिस और नक्सलियों के बीच गहरी सांठगांठ होने का आरोप लगाया था. इसी दिन उसके वकील ने कहा था कि जल्द ही कोई बड़ा नक्सली हमला होगा, जो पूरे देश को हिला कर रख देगा. इसके ठीक बाद झीरमघाटी कांड हुआ. तीन आईजी से प्रशस्ति पत्र पा चुका अभय सिंह 2002 से पुलिस के लिए काम करता था, लेकिन 2013 से पुलिस ही उसके पीछे पड़ गई. पुलिस ने आरोप लगाया गया कि अभय सिंह ने बलरामपुर वन विभाग के डिपो में आग लगा दी है, जबकि उस दिन अभय सिंह सुप्रीम कोर्ट में उपस्थित था. जब वे मामला सामने आया कि पुलिस जानबुझकर अभय सिंह को फंसा रही है, तो हाईकोर्ट द्वारा उसे पुलिस सुरक्षा मुहैया कराई गई. पुलिस सुरक्षा के दौरान अभय सिंह से हुई पूछताछ की रिपोर्ट हाईकोर्ट में जमा है, लेकिन पुलिस ने हाईकोर्ट से अपील की है कि सुरक्षा कारणों से वह रिपोर्ट सार्वजनिक न की जाए. पुलिस ने खुद यह स्वीकार किया है कि अभय सिंह के पास ऐसी जानकारियां हैं, जो अगर सार्वजनिक हो जाएं, तो छत्तीसगढ़ में सुरक्षा व्यवस्था को खतरा पैदा हो जाएगा. भूपेश बघेल ने यह भी आरोप लगाया है कि नक्सलियों के साथ सांठगांठ करके झीरमघाटी हमले की पूरी वीडियो रिकार्डिंग की गई है और उसी सीडी के लिए पुलिस वाले अभय सिंह पर दबाव बना रहे हैं. उन्हें लगता है कि अभय सिंह के पास वो सीडी है.

ऐसे तो ये पूरा मामला अदालत में लंबित है और मई तक सीबीआई को जवाब देना है कि वह इस मामले की जांच करेगी या नहीं. लेकिन कांग्रेस की मांग है कि नक्सली-पुलिस सांठगांठ की पूरी जांच सरकार की ओर से अविलंब सीबीआई को सौंप दी जाए. सीबीआई जांच से ही यह पता चलेगा कि नक्सलियों और पुलिस के बीच कैसी और कितनी गहरी सांठगांठ है. इसके साथ ही अभय सिंह का बयान भी सार्वजनिक होना चाहिए, जिससे प्रदेश की जनता के सामने सच सामने आ सके.

इधर, मुख्यमंत्री डॉ.रमन सिंह ने भूपेश बघेल पर निशाना साधते हुए कहा कि सिर्फ पेपर में नेतागिरी नहीं चलती. कांग्रेस को मीडिया में बयानबाजी की जगह एनआईए के सामने शपथपत्र देकर शिकायत करनी चाहिए. जांच में एनआईए जिसे लटका दे, वो लटक जाएगा. मुख्यमंत्री ने ये भी कहा कि झीरमघाटी नक्सल हमले की एनआईए जांच यूपीए सरकार ने शुरू की थी. अब कांग्रेस के पास अगर इन आरोपों का कोई प्रमाण हो, तो वह एनआईए के पास जमा करने की हिम्मत दिखाए. ■

feedback@chauthiduniya.com

महाराष्ट्र | अहमदनगर के किसानों ने लिया निर्णय

खेत नहीं जोतेंगे, उपज नहीं बेचेंगे

संजय अस्थाना

चम्पारण सत्याग्रह के शताब्दी वर्ष में खेती-किसानी पर राष्ट्रीय विमर्श के बीच महाराष्ट्र में अहमदनगर के किसानों ने एलान किया है कि वे आगामी एक जून से अपनी उपज नहीं बेचेंगे. मंडियों में उपज का वाजिब दाम न मिलने से निराश किसानों ने ये भी फैसला किया कि अब वे उतना ही खेत जोतेंगे, जिससे उनकी निजी जरूरतें पूरी हो सकें. किसानों ने फैसला किया है कि वे बिक्री के लिए फल-सब्जी-अनाज पैदा नहीं करेंगे. किसानों द्वारा ये फसला तीन अप्रैल को अहमदनगर की पुनताम्बा ग्राम सभा में हुई बैठक में किया गया.

इस बैठक में 40 गांवों के करीब दो हजार किसानों ने भाग लिया. बैठक में समस्याओं पर लंबे विचार-विमर्श के बाद संघर्ष की रूपरेखा तय की गई. वक्ताओं ने किसानों की समस्याओं के प्रति सरकार के उदासीन रवैये की निंदा की. उन्होंने मांग की कि स्वामीनाथन कमेटी की रिपोर्ट लागू की जाए. किसानों को लागत का दो गुना मूल्य, सौ फीसदी फसल बीमा, 60 वर्ष से अधिक उम्र वालों को पेंशन तथा ड्रिप सिंचाई के लिए सब्सिडी की भी मांग की गई. सभा के आयोजक किसान मंच के मराठवाड़ा क्षेत्र के प्रभारी धनंजय धोरडे पाटिल ने बताया कि उपरोक्त मांगों पर क्षेत्र के किसानों को लामबंद किया जा रहा है. अहमदनगर के अलावा औरंगाबाद, नासिक, पुणे, नांदेड़ आदि जिलों में किसान आंदोलित हैं. किसान मंच के कार्यकर्ता गांव-गांव जाकर किसानों से मिल रहे हैं. तीन अप्रैल को बैठक के बाद विभिन्न ग्राम पंचायतों में सभाएं हो चुकी हैं. आंदोलन के अगले चरण में एक मई को तहसील स्तर पर किसानों की बड़ी सभा होगी. तब तक मराठवाड़ा के अतिरिक्त विदर्भ और पश्चिमी महाराष्ट्र में भी किसानों को एकजुट करने का प्रयास किया जाएगा. श्री पाटिल ने विश्वास व्यक्त किया कि एक जून तक यह आंदोलन पूरे राज्य में फैल जाएगा.

मौजूदा हालात में आंदोलन को अपरिहार्य बताते हुए श्री पाटिल ने कहा कि किसानों की लगातार बदतर होती जा रही दशा के प्रति सरकार असंवेदनशील बनी हुई है. लगातार दो साल के सूखे के बाद पिछले वर्ष जब बारिश हुई, तो बंपर पैदावार हुई. किसानों को उम्मीद थी कि खुशियां घर आएंगी, लेकिन हुआ उल्टा. प्याज का उदाहरण देखिए, मंडी में जो दाम मिला वह मुनाफा तो छोड़िए, ट्रैक्टर का भाड़ा देने के लिए भी पर्याप्त नहीं था. नतीजा ये हुआ कि किसान निराशा व अवसाद में चले गए. यही वजह है कि प्रदेश में किसान आत्महत्या का सिलसिला थम नहीं रहा है. ऐसे में आंदोलन व संघर्ष ही एक मात्र रास्ता बचता है. श्री पाटिल ने स्पष्ट किया कि उनका आंदोलन पूरी तरह गैर राजनीतिक है. किसी भी दल के नेता के लिए मंच पर जगह नहीं है. आंदोलन को किसानों का व्यापक समर्थन मिल रहा है.

किसानों के इस आंदोलन और इनके फैसले को उचित ठहराते हुए किसान मंच के राष्ट्रीय अध्यक्ष विनोद सिंह ने कहा कि किसानों की मजबूरी ने अब आक्रोश का रूप ले लिया है. अगर वह खेत जोतता है और उसे लागत से भी कम दाम मिलता है, तो वह कर्ज में डूब जाता है. साल-दर-साल कर्ज बढ़ता जाता है. कर्ज माफी का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि यह कोई हल नहीं है. अगर सरकार ईमानदारी से किसान हित चाहती है, तो उसे अपने चुनावी घोषणापत्र का यह वादा पूरा करना चाहिए कि किसानों को लागत का दो गुना मूल्य मिलेगा. ऐसा न करके केन्द्र व राज्य दोनों ही सरकारें किसानों को मजबूर कर रही हैं कि वे आंदोलन का रास्ता अख्तियार करें. अगर सरकार ने समय रहते उचित कदम नहीं उठाया और किसानों ने खेत परती छोड़ दिया, तो यह सबके लिए दुर्भाग्यपूर्ण होगा जिसकी पूरी जिम्मेदारी सरकार पर होगी. ■

feedback@chauthiduniya.com

संघ को समझना राष्ट्रवाद से साक्षात्कार है

प्रो. राकेश सिन्हा

न्याय दर्शन में संवाद की जो सोलह विधाएं बताई गई हैं, उनमें दो विधाएं जल्प और वितण्डता भी हैं. जल्प का अर्थ होता है येन केन प्रकारेण दूसरों को ध्वस्त करना और वितण्डता झूठ-सच के मिश्रण और कुतर्क के सहारे सामने वाले को परास्त करने का प्रयास. राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सन्दर्भ में जो कथित विमर्श समाजवादियों के एक वर्ग, जिनमें मधु लिमये भी शामिल हैं और वामपंथी नेहरूवादियों द्वारा चलाया जाता रहा है, वह जल्प और वितण्डता का सबसे उपयुक्त उदाहरण है. पचास के दशक से लेकर आज तक संघ के जो आलोचक हैं, उनकी एक खासियत है. वे या तो संघ को समझते नहीं हैं या समझने का प्रयास ही नहीं करते. इससे भी बढ़कर वे संघ की विचारधारा को स्वयं परिभाषित करते हैं और फिर उसकी आलोचना भी करते हैं. यही कारण है कि इन आलोचनाओं का जनभावनाओं पर कोई विशेष असर नहीं हुआ है. मधु लिमये जी भारतीय राजनीति में उनलोगों में थे, जो अध्ययनशील रहते थे. उन्हें ज्ञान-परम्परा का महत्व मालूम था, लेकिन संघ के संदर्भ में उनका पूर्वाग्रह उनके इस लेख में साफ परिलक्षित होता है. इसमें उन्होंने संदर्भों से हटकर इसकी विचारधारा को उद्धृत करने का काम किया है, जिसका खास उद्देश्य एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचना था. यहां इस बात का उल्लेख करना आवश्यक है कि भारत के समाजवादियों में हमेशा दो धाराएं रही हैं. एक धारा उनलोगों की रही है, जो संघ के साथ असहमति तो रखते थे पर इसके साथ रचनात्मक संवाद को आवश्यक मानते थे और इसे वे राजनीतिक एजेंडे से हटकर समझने की कोशिश करते रहे हैं. इनमें अच्युत पटवर्धन, राममनोहर लोहिया, आचार्य जेबी कृपलानी, जयप्रकाश नारायण और जॉर्ज फर्नांडिस का नाम उल्लेखनीय है. इनके रचनात्मक प्रयास ने कई अवसरों पर भारतीय राजनीति को उसके निर्णायक दौर में प्रभावित करने का काम किया है. दूसरी तरफ एक दूसरी धारा भी रही है जिसमें रघु ठाकुर, मधु लिमये और किशन पटनायक जैसे लोग थे, जो संघ की विचारधारा को भारतीय संविधान, भारत की पंथनिरपेक्षता और भारतीय लोकतंत्र तीनों के लिए घातक मानते थे.

वस्तुत: भारतीय विमर्श का यह दुर्भाग्य रहा है कि संवाद को नारेबाजी के तौर पर प्रस्तुत किया जाता रहा है. इसके लिए प्राय: सभी पक्ष जिम्मेदार हैं. ऐसा करने वालों को इससे दो लाभ होता है. पहला, वे कठोर परिश्रम से बचते हैं. दूसरा, वे अपने लिए एक स्थाई छवि गढ़कर विमर्श की चौहद्दी को संदर्भहीन कर देते हैं.

राजनीतिक विमर्श को युद्धात्मक दृश्य (War of Positions) के आधार पर नहीं किया जाना चाहिए. यह विचार के विकास को और विचारों के बीच समन्वय को बाधित करता है. इसका एक उदाहरण मधु लिमये और जयप्रकाश नारायण के बीच देना प्रासंगिक होगा. घटना 1953 की है. जब प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने जयप्रकाश नारायण को योजना पर विचार-विमर्श के लिए आमंत्रित किया. तब जेपी ने जवाब में उन्हें कहा कि उनके पास अगले आठ महीने तक कोई वक्त नहीं है. आठ महीने बाद जब वे मिलने गए तो ऐसा लगा जैसे उन्होंने कोई भारी राजनीतिक अपराध कर दिया हो और नेहरू से नहीं नाजी हिटलर और फासिस्ट मुसोलिनी से मिल लिए हों. लगभग इसी अंदाज में जेपी पर मधु लिमये ने तीखे प्रहार किए और जेपी को सोशलिस्ट पार्टी के बैतुल अधिवेशन में नम आंखों से कटाक्षों के बीच अपनी सफाई देनी पड़ी. उधर नेहरू को भी जेपी के बचाव में प्रेस-विज्ञप्ति जारी करनी पड़ी. यह मधु लिमये पर कोई आरोप नहीं है, बल्कि भारतीय राजनीति एवं विमर्श की उस प्रवृत्ति की ओर इशारा है, जिसमें हम सभी विचारों को राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता की बलि चढ़ाते रहे हैं. 1979 में जनता पार्टी की सरकार के पतन का कारण जो लोग विचार को मानते हैं, वे अर्द्धसत्य बोल रहे हैं. वस्तुत: वह महत्वाकांक्षा और व्यक्तित्व के टकराव का परिणाम था.

मधु लिमये जी का 'आरएसएस क्या है?' नामक आलेख गलत मान्यता और अनुचित उद्धरणों पर आधारित है. संघ भारत की राष्ट्रीयता का आधार राजनीतिक नहीं, सांस्कृतिक मानता है, जिसमें नस्लवाद का कोई स्थान नहीं है. भारत पंथनिरपेक्ष इसलिए नहीं है कि स्वतंत्रता आंदोलन ने पंथनिरपेक्षता को अपना आदर्श माना और संविधान में इसका उल्लेख है, बल्कि यह सदियों से हमारे जीवन मूल्यों का हिस्सा रहा है. जिस जीवन मूल्य का तो कुछ लोग लाभ उठाना चाहते हैं, पर उसे मजबूत करना नहीं चाहते. संघ ऐसे तत्वों को राष्ट्र का शत्रु मानता है. जिनलोगों की निष्ठा राष्ट्रहित में नहीं होकर अंतरराष्ट्रीयवाद या धर्म के नाम पर देश में नहीं है, उन्हें शत्रु नहीं तो और क्या कहें? श्री गोलवलकर ने किसी धर्म या विचारधारा के सभी अनुयायियों को शत्रु नहीं मानकर, उनके कारण भारत की राष्ट्रवाद के खिलाफ शत्रुता भाव दिखाने वाले को राष्ट्र का शत्रु माना है. उनकी पुस्तक बंच ऑफ थॉट्स का चयनित उद्धरण देकर और उसे संदर्भहीन बनाकर उनके दर्शन को प्रस्तुत करने की कोशिश की जाती है. गोलवलकर भारत के सबसे प्रखर चिंतक और दार्शनिक हैं, जिन्होंने भारतीयता के प्रवाह को एक वैचारिक स्वरूप प्रदान करने का सफल कार्य किया है. मधु लिमये जिस पुस्तक 'वी आर ऑवर नेशनहुड डिफाइंड' को उद्धृत कर रहे हैं, वह श्री गोलवलकर की मौलिक रचना है ही नहीं. इस पुस्तक को सबसे पहले गणेश दामोदर सावरकर ने राष्ट्र मीमांसा के नाम पर लिखा था. श्री गोलवलकर को इसके अंग्रेजी अनुवाद की जिम्मेवारी दी गई थी. 30 के दशक के आरम्भिक काल में और 30 के दशक के अंतिम हिस्से में जमीन आसमान का अंतर है. यह पुस्तक आरंभिक काल का है और अनुवादक पर उसके तथ्यों की कोई जिम्मेवारी नहीं होती है. स्वयं गोलवलकर ने सावरकर जी के जन्मोत्सव पर मुंबई में भाषण करते हुए इस बात का खुलासा किया था कि यह उनकी रचना नहीं है. लेकिन वामपंथी और समाजवादी मार्क्स की रचना को पढ़ने की जगह इस पुस्तक को ही अधिक पढ़ते रहे हैं, क्योंकि यह वितण्डतावादी विमर्श में उनके लिए उपयोगी सिद्ध होता रहा है. संघ के राष्ट्रवाद में नस्लवाद का कोई स्थान नहीं है. यह हिन्दू शब्द को सभ्यताई परिप्रेक्ष्य में परिभाषित करता है. संघ का बौद्धिक उपक्रम हिन्दू शब्द की अवधारणा में कालांतर में हुए क्षरण के कारण को समझना और उसे समाप्त कर हिन्दू शब्द और उसके अवधारणा को मौलिक और भूसांस्कृतिक अर्थ प्रदान करना है. भारत की राष्ट्रीयता, इसकी सांस्कृतिक और बौद्धिक विरासत, जिसमें वैदिक रचनाओं तथा उपनिषद से लेकर समर्थ रामदास का दास बोध एवं वे सभी रचनाएं शामिल हैं जो देश को संकीर्णताओं से ऊपर उठकर एक सूत्र में बांधने का काम करती हैं. इन भारतीय बौद्धिक रचनाओं की एक विशिष्टता है. यहां दर्शन और अध्यात्म के बीच परस्पर गहरा सम्बन्ध है. इसे समझे बिना आलोचक इन बौद्धिक विरासत को बाइबिल और कुरान की तरह एक धर्म विशेष की रचना बताकर उसके महत्व का अवमूल्यन कर देते हैं. संघ इस प्रक्रिया का लगातार प्रतिकार करता रहा है. इसमें अनेक समाजवादी चिंतकों से संघ का परस्पर संवाद रहा है, जिनमें आचार्य कृपलानी की पुस्तक 'द माइनोरिटीज इन इंडिया (1948)' विशेष उल्लेखनीय है.

4 01 मई- 07 मई 2017
जयंती विशेष
www.chauthiduniya.com
चौथी दुनिया

आरएसएस क्या है?

संघ के संदर्भ में यह कहना कि वह हिन्दी को थोपना चाहता है. यह यथार्थ का गला घोटने जैसा है. संघ भारतीय भाषाओं को समान रूप से उपयोगी और भारतीय संस्कृति का वाहक मानता रहा है. हिन्दी को राष्ट्रभाषा का स्थान दिलाना किसी भाषा का अवमूल्यन या उसके अस्तित्व पर सवाल नहीं हो सकता है. भारत की सभी भाषाओं का संस्कृति से गहरा सम्बन्ध है. इस सम्बन्ध में एक उदाहरण प्रासंगिक होगा. 60 के दशक में जब राज्यों के पुनर्गठन के संदर्भ में हलचल मची हुई थी तब श्री गोलवलकर ने राष्ट्रहित में यथार्थवादी स्टैंड लिया. पंजाब में यह अभियान चलाया जा रहा था कि लोग अपनी मातृभाषा हिन्दी लिखवाएं. तब गोलवलकर ने कहा कि जिनकी लिपि गुरुमुखी और भाषा पंजाबी है, वे हिन्दी नहीं लिखाएं. उस समय उन्हें कई संकीर्ण मानसिकता से युक्त हिन्दी समर्थकों के विरोध का सामना करना पड़ा था. वे राष्ट्र और पीढ़ियों को देखकर बोलते थे न कि तात्कालिकता या परिस्थितियों के दबाव में.

जहां तक भारत में संघवाद का प्रश्न है, इस संदर्भ में संघ का मत साफ रहा है कि देश में एक मजबूत केन्द्र का होना आवश्यक है. सच यह है कि भारत का संघवाद प्रशासनिक है, तभी तो राजनीतिक विद्वानों जैसे केसी व्हेअर ने इसे अर्द्ध संघवाद (Quasi Federalism) माना है. जो लोग भारत की संघीय व्यवस्था में उपराष्ट्रीयता का बीज देखते हैं, ऐसे समाजवादी और वामपंथी संघ से असहमत रहेंगे. श्री गोलवलकर का साफ मानना था कि भारत में कोई उपराष्ट्रीयता नहीं है. ध्यान रहे कि भारत की कम्युनिस्ट पार्टी ने आजादी के बाद 17 संविधान सभाओं की मांग की थी.

मधु लिमये जी जिसे संघ और लोहिया जी के बीच के तालमेल को क्षणिक ट्रायल मानते हैं, वह वस्तुत: हकीकत नहीं है. डॉ. लोहिया की दीनदयाल जी के साथ गैरकांग्रेसवाद के साथ एकजुट होना सिर्फ राजनीतिक कार्यक्रम नहीं था, बल्कि दो विचारधाराओं का एक दूसरे को समझने का प्रयास था. इसका अगला पड़ाव सन चौहत्तर में तब दिखाई पड़ा, जब जेपी मधु लिमये जैसे सहयोगियों के विरोध के बावजूद 1973 में जनसंघ के अधिवेशन में शामिल हुए और सतहत्तर में संघ शिक्षा वर्ग में भाषण देने आए. यहां यह कहना भी जेपी के साथ अन्याय होगा कि उन्होंने संघ के सामने आत्मसमर्पण कर दिया था. वे वास्तव में संघ आंदोलन में आर्थिक पक्ष की वरीयता को स्थापित करने के लिए एक आशावादी चिंतक के रूप में सतत प्रयासरत रहे. संघ शिक्षा वर्ग के भाषण में भी उन्होंने संघ को सामाजिक-आर्थिक समानता की लड़ाई लड़ने की नसीहत दी. संघ ने आपातकाल के दौरान लोकतंत्र को बचाने के लिए जो संघर्ष किया, उससे उनलोगों का पर्दाफाश हुआ, जो संघ को लोकतंत्र विरोधी कहकर उसकी आलोचना करते रहे. मधु लिमये जी के लेख में संघ के प्रति उनके ईमानदार पूर्वाग्रह को दो उदाहरणों से समझा जा सकता है. पहला उदाहरण 1968 का पहला साम्प्रदायिकता विरोधी सम्मेलन है, जिसका आयोजन सुभद्रा जोशी की साम्प्रदायिकता विरोधी कमेटी ने किया था. ध्यान रहे कि संविद सरकार बनने के बाद यह सम्मेलन हुआ था. इसमें जयप्रकाश नारायण अध्यक्ष थे. सम्मेलन की कार्यवाही पर टिप्पणी करते हुए जेपी ने कहा था कि ऐसा लगता है कि यह सम्मेलन साम्प्रदायिकता नहीं, बल्कि संघ के खिलाफ आयोजित किया गया है. इस सम्मेलन के उद्घाटन सत्र में डी. संजीवैय्या ने सुभद्रा जोशी के उस भाषण का प्रतिकार किया, जिसमें उन्होंने बहुसंख्यक को अल्पसंख्यक साम्प्रदायिकता से अधिक खतरनाक बताया था. मधु लिमये और सुभद्रा जोशी के सामाजिक दर्शन में समानता देखी जा सकती है. उन दोनों की मान्यता थी कि संघ भारतीय संवैधानिक व्यवस्था में एक अवैधानिक संस्था है.

दूसरी घटना 1978 की है. जब इसी संस्था ने दिल्ली में ही 'कैरेक्टर ऑफ आरएसएस' पर एक सेमिनार किया, तब रघु ठाकुर (जो मधु लिमये जी के सामाजिक दर्शन के पैरोकार रहे हैं) ने संघ की कटु आलोचना की. ध्यान रहे कि यह सम्मेलन जनता पार्टी की सरकार बनने के एक साल बाद किया गया और संघ की आलोचना का तब कोई विशेष कारण नहीं था. तब रघु ठाकुर का प्रतिकार और किसी ने नहीं, बल्कि मार्क्सवादी पार्टी के नेता जहूर सिद्दीकी ने इन शब्दों में किया, आपातकाल के दौरान तुर्कमान गेट, मुजफ्फरनगर और पिपली में जब अल्पसंख्यकों पर अत्याचार हो रहा था, तब उन स्थानों पर गोलवलकर नहीं थे.

मधु लिमये जी की आलोचना में संघ के प्रति उनकी समझ जिन बातों के आधार पर बनी, उनमें भारतीय राजनीति में वैचारिक ध्रुवीकरण का प्रभाव था. दूसरा एक कारण यह भी रहा है कि संघ के अपने साहित्य, जिसमें उसकी विचारधारा का विस्तृत और स्पष्टता के साथ विवेचन हो, उसकी अल्पता रही है. संघ ने हमेशा प्रत्यक्ष उदाहरण एवं गतिविधियों द्वारा अपनी विचारधारा को स्थापित तथा विस्तार करने का रास्ता चुना है, जिसके कारण इसके आलोचकों को भी इसे समझने में कई अवसरों पर धोखा होता रहा है. संघ एक वास्तविकता है और बहस संघ पर नहीं बल्कि इसके द्वारा जो वैचारिक प्रतिमान प्रस्तुत किए जाते हैं, उस पर होनी चाहिए. तब इसके आलोचक पाएंगे कि उसमें स्वामी विवेकानन्द भी हैं, महर्षि अरविन्द भी हैं, प्राचीन और मध्य युग का वैचारिक प्रवाह भी है और पीढ़ियों की चिंता भी शामिल है.■

लेखक प्रख्यात संघ विचारक हैं

feedback@chauthiduniya.com

बांग्लादेश में उर्दू भाषी मुसलमान

हमदर्दी की आस में दर्द और गहराता गया

ढाका से लौटकर अभिषेक रंजन सिंह

इंसान दो सूरतों में पलायन करता है. एक मजबूरी में और दूसरा अपनी खुशी से. भारत विभाजन के समय बंगाल, पंजाब और बिहार में भीषण सांप्रदायिक दंगे हुए. कभी साथ मिलकर आजादी की लड़ाई लड़ने वालों के बीच खूनी जंग शुरू हो गई. कत्ल-ओ-गारत की इस घटना में लाखों लोगों को अपनी जान गंवानी पड़ी. बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश से लाखों मुसलमान मजहब के नाम पर बने देश पूर्वी पाकिस्तान गए. चौबीस वर्षों तक इन लोगों को यहां कोई परेशानी नहीं हुई, लेकिन 1971 में बांग्लादेश बनने के बाद बंगालियों की नजरों में बिहारी मुसलमानों की पहचान एक गद्दार के रूप में होने लगी. अपने ही देश में उनकी हालत शरणार्थियों जैसी हो गई. नौ साल पहले बांग्लादेश हाईकोर्ट के आदेश पर उन्हें नागरिकता मिली, लेकिन उनकी दुश्वारियां अब भी बरकरार है.

दरअसल, बांग्लादेश में रहने वाले उर्दू भाषी बिहारी मुसलमान दशकों से गैर बराबरी के शिकार रहे हैं. हालांकि, हालात अब पहले से कुछ बेहतर हैं, लेकिन देश की चुनावी राजनीति और सरकारी नौकरियों में इनकी भागीदारी अब भी सिफर है. इन लोगों को बांग्लादेश नेशनलिस्ट पार्टी और जमात-ए-इस्लामी का समर्थक माना जाता है. बांग्लादेश में इन्हें इसलिए भी हिकारत भरी निगाहों से देखा जाता है, क्योंकि ये लोग पाकिस्तान के विभाजन के खिलाफ थे और इन्होंने वर्ष 1971 के मुक्ति युद्ध में पाकिस्तानी फौज का साथ दिया था. राजधानी ढाका में बिहारी मुसलमानों की कुल आबादी 1,25,000 हजार है. जबकि पूरे बांग्लादेश में इनकी तादाद 7,50,000 है. 1947 के भारत विभाजन के समय तकरीबन 14 लाख उर्दू भाषी मुसलमान पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) गए थे. वहां जाने वालों में ज्यादातर बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश के मुसलमान थे. हालांकि इनमें काफी लोग कुछ ही दिनों बाद वापस भी लौट आए, क्योंकि वहां की संस्कृति और जबान उन्हें रास नहीं आई. इनमें से करीब 1,70,000 लोग बाद में पाकिस्तान चले गए. वर्षों इंतजार के बाद 10 जनवरी 1993 में बांग्लादेश से 325 लोगों का एक जत्था पाकिस्तान के शहर कराची जाकर बस गया. ये सभी लोग यह सोचकर पाकिस्तान गए थे कि यहां उन्हें खुशनुमा जिंदगी मिलेगी, लेकिन वहां उनकी जिंदगी मुहाजिरों से भी बदतर हो गई. इन लोगों को पाकिस्तानी खुले दिल से स्वीकार नहीं कर रहे हैं. वापस बांग्लादेश जा नहीं सकते और भारत आने का कोई सवाल ही नहीं है. सत्तर के दशक में मुक्ति युद्ध के दौरान बिहारी मुसलमानों ने पाकिस्तान का समर्थन किया और बांग्लादेश बनने के बाद संपन्न लोग पाकिस्तान चले गए. गरीबों के लिए पाकिस्तान जाना मुमकिन नहीं था, नतीजतन वे शरणार्थियों की मानिंद आज भी बांग्लादेश में रह रहे हैं. बिहारी मुसलमानों ने भले ही पाकिस्तान का समर्थन किया हो, लेकिन पाकिस्तान ने कभी भी इन लोगों के प्रति हमदर्दी नहीं दिखाई.

मोहम्मदपुर कैंप की रहने वाली सायदा सुल्ताना बेगम बताती हैं, मेरे चाचा मुश्ताक अली अपनी बीवी-बच्चों के साथ कराची गए, लेकिन वहां उनकी जिंदगी जहन्नुम बन गई है. यह कहानी सिर्फ एक मुश्ताक की नहीं है, बल्कि बांग्लादेश से पाकिस्तान गए उन तमाम लोगों की है, जिन्होंने वहां रहने का फैसला किया. कुछ साल पहले उनका इंतकाल हो गया. वे जब भी फोन करते थे, तो एक ही बात कहते थे इस जिंदगी से बेहतर है कि मौत आ जाए. जाने वालों ने सोचा था कि वहां उन्हें बेहतर जिंदगी मिलेगी, लेकिन उनकी हालत मुहाजिरों से भी बदतर हो गई. कराची में भी इनकी जिंदगी बद से बदतर है. पाकिस्तान में अल्ताफ हुसैन की अगुवाई वाली मुत्तहिदा कौमी मूवमेंट को छोड़कर दीगर सियासी पार्टियों को बिहारी मुसलमानों की कोई चिंता नहीं है. मीरपुर कैंप में रहने वाली सितारा परवीन ढाका में गारमेंट्स फैक्ट्री में काम करती हैं. भारत विभाजन के वक्त उनका परिवार बिहार के मुंगेर से ढाका आकर बसा था. बांग्लादेश बनने से पहले बिहारी मुसलमानों की हालत अच्छी थी. लेकिन बाद में हालात खराब हो गए. बांग्लादेश के बंगाली मुसलमान उन्हें देशद्रोही समझते हैं, जबकि यह पूरी सच्चाई नहीं है.

ढाका में बिहारी मुसलमानों और बंगाली मुसलमानों के

बीच अक्सर खूनी संघर्ष की घटनाएं होती हैं. कभी त्योहार के नाम पर तो कभी अपनी स्वायत के नाम पर. इन घटनाओं में अक्सर कई जिंदगियां जाया होती हैं. हताहत होने वाले ज्यादातर बिहारी मुसलमान ही होते हैं. साल 2014 की बात करें, तो मीरपुर कैंप में एक बिहारी मुसलमान परिवार को घर में बंद कर जिंदा जला दिया गया. इस घटना में नौ लोगों की मौत हो गई थी. विवाद शब-ए-बारात के मौके पर पटाखे फोड़ने को लेकर शुरू हुई थी. देखते ही देखते यह खूनी संघर्ष में तब्दील हो गया. सामाजिक कार्यकर्ता जैनब खातून बताती हैं, ढाका में बिहारी मुसलमानों को निशाना बनाने के लिए सिर्फ एक बहाना चाहिए. उनके मुताबिक, स्थानीय पुलिस-प्रशासन का रवैया भी बिहारी मुसलमानों के प्रति सकारात्मक नहीं है. बांग्लादेश में रहने वाले उर्दू भाषी बिहारी मुसलमानों की समस्याएं यहीं खत्म नहीं होती. मुल्क में कई दशकों से रहने के बावजूद उन्हें हिकारत भरी निगाहों से देखा जाता है. सुन्नी मुसलमान होने के बावजूद उर्दू भाषियों से बंगाली मुसलमान शादियां नहीं करते. दरअसल, गैर बिहारी मुसलमानों की नजर में बिहारी मुसलमान मुल्क के गद्दार हैं. इसलिए उनसे किसी तरह का संबंध रखना वह उचित नहीं मानते. ईरानी कैंप में रहने वाली रीशन आरा बताती हैं कि नई पीढ़ी की सोच में थोड़ी तब्दीली जरूर आई है, लेकिन एक-दो शादियों को छोड़ दें, तो बिहारी मुसलमानों से कोई रोटी-बेटी का संबंध रखना नहीं चाहता.

उर्दू स्पीकिंग पीपुल्स यूथ रिहैबिलिटेशन मूवमेंट (यूएसपीयूआरएम) के अध्यक्ष सदाकत खान कई वर्षों से उर्दू भाषी बिहारी मुसलमानों के अधिकारों की लड़ाई लड़ रहे हैं. बिहारी मुसलमानों की नागरिकता और मताधिकार का हक मिले इस बाबत उन्होंने बांग्लादेश हाईकोर्ट में एक रिट पेटीशन 10129/2007 सदाकत खान वगैरह बनाम बांग्लादेश सरकार-चुनाव आयोग वगैरह दायर किया था. साल 2008 में हाईकोर्ट ने ऐतिहासिक फैसला सुनाते हुए बिहारी मुसलमानों को बांग्लादेश की नागरिकता और वोटिंग राइट देने का आदेश दिया. अदालत ने यह भी कहा कि जिन लोगों का जन्म 1971 के बाद हुआ है, वे सभी बांग्लादेशी नागरिक हैं और देश के संसाधनों पर उनका बराबर हक़ है. उर्दू स्पीकिंग पीपुल्स यूथ रिहैबिलिटेशन मूवमेंट (यूएसपीयूआरएम) के अध्यक्ष सदाकत खान ने कहा, बिहारी मुसलमानों के लिए अदालत का यह फैसला बेहद अहम है. बांग्लादेश की नागरिकता मिलने के बाद पहली बार 2009 के चुनाव में बिहारी मुसलमानों ने वोट दिया था. हमारी लड़ाई यहीं खत्म नहीं होती, क्योंकि बिहारी मुसलमानों से जुड़े कई ऐसे मुद्दे हैं, जो ज़र-ए-बहस हैं.

बांग्लादेश हाईकोर्ट के आदेश के बाद उर्दू भाषी बिहारी मुसलमानों को नागरिकता और वोटिंग अधिकार भले ही मिल गया हो, लेकिन सियासत में उनकी नुमाइंदगी अब भी सिफर है. समूचे बांग्लादेश में साढ़े सात लाख बिहारी मुसलमान हैं. लेकिन देश के चुनावी इतिहास में सिर्फ एक बिहारी मुसलमान को सांसद बनने का मौका मिला. सैदपुर की निलफामारी सीट से जातीय पार्टी के उम्मीदवार चुनाव जीतने में सफल रहे.

1971 की जंग में पाकिस्तान की हार और बांग्लादेश बनने के बाद बंगालियों का आक्रोश बिहारी मुसलमानों पर टूट पड़ा. लाखों बिहारी मुसलमानों को अपने घरों और नौकरी से बेदखल होना पड़ा. उस बर्बर घटना को याद करते हुए उर्दू स्पीकिंग पीपुल्स यूथ रिहैबिलिटेशन मूवमेंट (यूएसपीयूआरएम) के महासचिव शाहिद अली बबलू बताते हैं, नया मुल्क बनने के बाद बिहारी मुसलमानों के घरों की तलाशी लेने का फरमान सुनाया गया. पुलिस की मौजूदगी में लोगों को घरों से बाहर एक खुले मैदान में बैठा दिया गया. तलाशी के नाम पर बुजुर्गों और महिलाओं के साथ गलत व्यवहार किया गया. घरों में लूटपाट भी की गई और हम अपने पक्के घरों से बेदखल होकर खुले आसमान के नीचे आ गए. साल 1976 में रेड क्रॉस सोसायटी के सहयोग से ढाका में बिहारी मुसलमानों के लिए कैंप बनाए गए. लेकिन चार दशक बाद भी हमें कैंपों में रहना पड़ रहा है. साल 1974 में भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश के बीच एक समझौता हुआ था. इसके तहत पाकिस्तान उर्दू भाषी इन बिहारी मुसलमानों को पाकिस्तान में बसाने पर सहमत हो गया था. लेकिन 1,26,000 लोगों को छोड़कर बाकी लोग आज भी बांग्लादेश में ही हैं. शाहिद अली बबलू के मुताबिक, अब पाकिस्तान जाने का कोई सवाल ही नहीं है, क्योंकि वहां मौजूद मुहाजिरों और बांग्लादेश से गए लोगों की बदतर हालत किसी से छुपी नहीं है. अब हमारा मुल्क यही है और हमें यहीं की मिट्टी में दफन होना है.

बांग्लादेश में मुक्ति युद्ध के दौरान दस लाख लोग मारे गए थे. करीब दो लाख महिलाओं के साथ पाकिस्तानी फौज और रजाकरों ने बलात्कार किया था. बिहारी मुसलमानों में ज्यादातर लोग पाकिस्तानी फौज का साथ दे रहे थे. लेकिन लाखों लोग ऐसे भी थे, जो अपनी जान बचाने की कोशिशों में जुटे थे. सामाजिक कार्यकर्ता मसूद खान बताते हैं, जब मुक्ति वाहिनी की ओर से बिहारी मुसलमानों को निशाना बनाया जा रहा था. उस वक्त अपनी जान बचाने के लिए उन लोगों ने भारतीय फौज से गुहार लगाई. चूंकि भारतीय फौज को उर्दू समझने में कोई दिक्कत नहीं थी, इसलिए बिहारी मुसलमान अपनी पीड़ा बताने में कामयाब रहे. भारतीय फौज भी इस बात से वाकिफ थी कि बांग्लादेश के सारे बिहारी मुसलमान पाकिस्तान के साथ नहीं हैं. इसलिए बेगुनाहों के साथ कोई जुल्म न हो इसके लिए उन्होंने बिहारी मुसलमानों को संरक्षण देकर मुक्ति वाहिनी के लड़ाकों से बचाया. बिहारी मुसलमान इसके लिए आज भी भारतीय फौज के शुक्रगुजार हैं. बांग्लादेश के बिहारी मुसलमानों को पाकिस्तान का समर्थक माना जाता है, लेकिन कई लोग इन आरोपों को सही नहीं मानते. उर्दू भाषियों के हितों के लिए संघर्षरत सदाकत खान बताते हैं, यह सही है कि ज्यादातर बिहारी मुसलमान पाकिस्तान के बंटवारे के पक्ष में नहीं थे. लेकिन कई काफी संख्या में वैसे बिहारी मुसलमान भी थे, जो मुक्ति वाहिनी में शामिल होकर पाकिस्तानी फौज का मुकाबला कर रहे थे. आम लोगों की धारणा है कि बिहारी मुसलमानों ने पाकिस्तानी सेना का साथ दिया, लेकिन कोई यह नहीं कहता है कि बंगालियों का एक बड़ा हिस्सा ऐसा भी था, जो मुक्ति युद्ध के खिलाफ रहा. उन्होंने पाकिस्तान का साथ दिया, लेकिन तोहमत हमारे उपर लगाया जाता है. युद्ध अपराध में जिन लोगों को फांसी दी गई, उनमें एक भी बिहारी मुसलमान नहीं था और वे सभी बंगाली मुसलमान थे. जमात-ए-इस्लामी के अध्यक्ष मोतिउर रहमान निजामी बंगाली मुसलमान थे न कि बिहारी. इसके बावजूद हमें पाकिस्तान परस्त कहा जाता है.

सैयद जुबैर अहमद मीरपुर में उर्दू भाषी मुसलमानों के लिए कानूनी लड़ाई लड़ते हैं. चौथी दुनिया से बातचीत में उन्होंने बताया कि बांग्लादेश बनने के बाद बंगबंधु शेख मुजीबुर्रहमान ढाका के रेसकोर्स मैदान में एक विशाल जनसभा को संबोधित कर रहे थे. मुक्ति युद्ध के दौरान जिन बिहारी मुसलमानों ने पाकिस्तान का साथ दिया था. उनके बारे में उनका कहना था कि जो बातें बीत गई हैं, उसे भुला देना चाहिए. पाकिस्तान का साथ देने वालों को उन्होंने आम माफी देने का ऐलान किया. शेख मुजीब ने कहा था, बिहारी और बंगाली दोनों अब बांग्लादेशी हैं और पुरानी बातों को याद करने से तकलीफें बढ़ती हैं. इसलिए दोनों कौम एक साथ मिलकर बांग्लादेश की तरक्की में अपना योगदान दें. उनकी इस अपील से बिहारी मुसलमानों को काफी हिम्मत मिली और उन्हें अपनी गलती का एहसास भी हुआ. बदकिस्मती से उनकी हत्या ऐसे वक्त हुई, जब बांग्लादेश के बिहारी मुसलमानों को उनकी जरूरत थी. उनके नहीं रहने से हम अनाथ हो गए. कोई सरकार हमारी सुनने वाली नहीं थी. नतीजतन हमारी जिंदगी में कोई बदलाव नहीं आया.

बांग्लादेश हाईकोर्ट के आदेश के बाद उर्दूभाषी बिहारी मुसलमानों को नागरिकता और वोटिंग अधिकार भले ही मिल गया हो, लेकिन सियासत में उनकी नुमांइदगी अब भी सिफर है. समूचे बांग्लादेश में साढ़े सात लाख बिहारी मुसलमान हैं. लेकिन देश के चुनावी इतिहास में सिर्फ एक बिहारी मुसलमान को सांसद बनने का मौका मिला. सैदपुर की निलफामारी सीट से जातीय पार्टी के उम्मीदवार चुनाव जीतने में सफल रहे. अमूमन बिहारी मुसलमानो के बारे में कहा जाता है कि वे बांग्लादेश नेशनलिस्ट पार्टी या फिर जमात-ए-इस्लामी के समर्थक हैं. इसे खारिज करते हुए मोहम्मद शमशाद बताते हैं कि मौजूदा समय में पचास फीसदी बिहारी मुसलमान वामी लीग के साथ हैं और पचास फीसद बीएनपी के साथ हैं.

जमात-ए-इस्लामी फिरकापरस्त पार्टी है, इसलिए बिहारी मुसलमान उनके साथ नहीं है. बांग्लादेश सिटी म्यूनिसिपल कॉरपोरेशन में कुल 92 वार्ड हैं, लेकिन एक भी बिहारी मुसलमान वार्ड काउंसलर नहीं है. जबकि ढाका के कई वार्डों में उर्दू भाषी मुसलमानों की संख्या अधिक है. बिहारी मुसलमानों को बांग्लादेश की नागरिकता मिले नौ साल हो गए. पहली मर्तबा 2009 के नेशनल असेंबली के चुनाव में इन्होंने अपने मताधिकार का प्रयोग किया था. ■

feedback@chauthiduniya.com

विपक्ष को ईवीएम मुद्दे पर एकजुट होना चाहिए

www.kamalmorarka.com

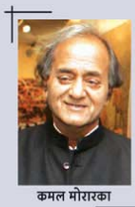

कमल मोरारका

ऐसा लगता है कि पूरा विपक्ष अव्यवस्था का शिकार है. हतोत्साहित होना स्वाभाविक है, क्योंकि चुनाव के नतीजे उसके लिए निराशाजनक हैं. लेकिन उससे बढ़कर ये कि एक प्रभावी नेतृत्व का आभाव है. उसे नरेन्द्र मोदी का वैकल्पिक नेता चाहिए. आप किसी भी नेता को चुन सकते हैं, जो कोई ज़रूरी नहीं कि युवा हो, लेकिन अनुभवी हो और सेक्युलर नजरिया का हो. इस संदर्भ में शरद पवार सबसे बेहतर व्यक्ति हो सकते हैं, लेकिन अब वे 75 वर्ष के हो चुके हैं और मुझे नहीं मालूम कि ये अब संभव है या नहीं. बहरहाल, कांग्रेस के बिना यह संभव नहीं है. विपक्ष की जो भी रणनीति हो, उसमें कांग्रेस को साथ लेना ही पड़ेगा, क्योंकि कांग्रेस ही ऐसी पार्टी है, जिसकी उपस्थिति पूरे देश में है. भले ही उनकी संख्या बहुत अधिक न हो, लेकिन देश के हर गांव में कांग्रेस के लोग मिल जाएंगे. पहले जनता ग्रुप का गैर-कांग्रेस, गैर-भाजपा का प्रयोग था वो ठीक था, हमने 2014 में मुलायम सिंह यादव को नेता घोषित कर इस इस प्रयोग को दुहराया, लेकिन वे कारगर साबित नहीं हुआ. उसके बाद जो अच्छी बात हुई, वो ये थी कि नीतीश कुमार बिहार का चुनाव जीत कर मुख्यमंत्री बन गए. लेकिन अभी नए सिरे से सोचने की आवश्यकता है.

फ़िलहाल, जिस तरह से चुनाव हो रहे हैं, उसमें ईवीएम के ऊपर संदेह व्यक्त किया जा रहा है. ये कहना आसान है कि आप हार गए इसलिए आप कह रहे हैं कि ईवीएम से छेड़छाड़ की गई है. पंजाब के मुख्यमंत्री अमरिंदर सिंह ये कहते हैं कि यदि ईवीएम के साथ छेड़छाड़ की गई होती, तो सुखबीर सिंह बादल मुख्यमंत्री होते, वे नहीं होते. कहने का अर्थ ये है कि इसके दो पहलू हैं. लेकिन मेरे हिसाब से विपक्ष की शुरुआती बिंदु ये होनी चाहिए कि पूरा विपक्ष एक समझौता करे कि वे एक साथ आएंगे और उनकी पहली मांग ये होनी चाहिए कि 2019 का चुनाव बैलेट पेपर के ज़रिए होना चाहिए, ईवीएम के जरिए नहीं. ये एक ऐसा मुद्दा है, जिस पर सब को हरकत में आ जाना चाहिए. इसका नतीजा क्या होगा, ये चुनाव के बाद पता चलेगा, लेकिन ये सबको साथ लेने का मुद्दा बन सकता है. बदकिस्मती से ऐसा लगता है कि ये मुद्दा समाप्त हो गया है. केवल केजरीवाल हैं, जो इसको उठा रहे हैं. भले ही केजरीवाल दिल्ली के मुख्यमंत्री हैं, लेकिन मैं फिलहाल उन्हें मुख्यधारा के विपक्ष में शुमार नहीं करता. जनता दल या जनता पार्टी के अलग-अलग गुटों (समाजवादी पार्टी, जेडीयू, जेडीएस) के नेताओं को इस राष्ट्रीय मुद्दे पर अपना मन बना लेना चाहिए. चुनाव सुधार हमेशा से जनता ग्रुप के एजेंडे पर था. उस समय चुनाव सुधार में पैसे का खर्च आदि मुद्दे थे, जो अब कहीं पृष्ठभूमि में चले गए हैं. अब तकनीक के इस्तेमाल से मशीन के साथ छेड़छाड़ करना मुमकिन है, तो फिर कोई चुनाव ही नहीं है. फिर तो हम अफ्रीका के जैसे बन जाएंगे, जहां चुनाव चुराए जाते हैं और एक व्यक्ति लगातार सत्ता में बना रहता है. दरअसल, वे नाम के लोकतंत्र हैं. हमें खुद को उस स्टेज पर नहीं पहुंचाना चाहिए. भाजपा को आने वाले 20 सालों तक जीतने दीजिए, लेकिन ये जीत साफ़ सुथरी और ईमानदारी पूर्ण हो, न कि तकनीक के ट्रिक से. लिहाज़ा, हर व्यक्ति की ये पहली ज़िम्मेदारी है कि लोकतांत्रिक प्रक्रिया की प्रमाणिकता को बहाल किया जाए.

मुझे नहीं मालूम कि कांग्रेस क्या सोच रही है. उन्होंने पंजाब में चुनाव जीत लिया, तो इसका ये मतलब नहीं कि मुद्दा समाप्त हो गया. पंजाब में ईवीएम से छेड़छाड़ की थ्योरी पर बात करें, तो ये भी कहा जा सकता है कि ये संभव है कि अकाली दल ने सोचा हो कि कांग्रेस और आम आदमी पार्टी में कांग्रेस बेहतर है. लिहाज़ा, जो ईवीएम से छेड़छाड़ कर रहे हैं, उन्होंने आम आदमी पार्टी के खिलाफ कर दिया होगा. हमें सच्चाई नहीं मालूम है, ये सब अटकलों का विषय है. लेकिन मैं समझता हूं कि विपक्ष को पहला काम ये करना चाहिए कि सबको एक सुर में कहना चाहिए कि देश में चुनाव वैसे ही हों, जैसे पहले हुआ करते थे. बैलेट पेपर भले ही आधुनिक नहीं है, लेकिन हर आधुनिक तकनीक के दोनों पहलू हैं, ये तेज़ है, अधिक दक्ष है, लेकिन यदि इसमें छेड़छाड़ की सम्भावना है, तो फिर ये चुनाव नहीं है. अमेरिका में भी जब जॉर्ज बुश पहली बार चुने गए थे, तो वहां भी मशीन के साथ छेड़छाड़ के आरोप लगे थे. सुप्रीम कोर्ट ने उन्हें राष्ट्रपति बनाया था. वे दोषपूर्ण तरीके से चुने गए थे. लिहाजा, हमें भारत में ये नहीं आने देनी चाहिए. हम बहुत ही बुद्धिमान देश हैं. पंचायत स्तर तक चुनाव होते हैं. पंचायत चुनाव में जहां ईवीएम का प्रयोग नहीं होता है, वहां आम तौर पर सरपंच का चुनाव निष्पक्षता और ईमानदारी से होता है.

लिहाज़ा, मैं समझता हूं कि ईवीएम वो पहला मुद्दा है, जिस पर विपक्ष को एकमत होना चाहिए, क्योंकि यदि ईवीएम से छेड़छाड़ होती है, तो फिर विपक्षी एकता का मतलब क्या है? जब वोट पहले से ही तय हो गए हैं, तो एकता की बात करना अपनी उर्जा व्यर्थ करने के समान है. इस मुद्दे पर विपक्ष को अवश्य इकट्ठा होना चाहिए और सरकार पर इतना दबाव ज़रूर बनाना चाहिए कि वो कानून बनाए कि चुनाव आयोग फिर से पुरानी पद्धति से चुनाव करवाए. जब सुब्रमण्यम स्वामी विपक्ष में थे, तो उन्होंने 2009 में कहा था कि ईवीएम से छेड़छाड़ की जा सकती है. उन्होंने ये कोशिश करेगा कि भाजपा उम्मीदवार के खिलाफ केवल एक ही उम्मीदवार रहे. लेकिन प्रक्रिया साफ़ सुथरी और पारदर्शी होनी चाहिए.

गाय के मुद्दे पर विपक्ष को ये कहना चाहिए कि गाय के ऊपर एक नीति बने या फिर इसे राज्यों के ऊपर छोड़ देना चाहिए कि हर राज्य अपनी गाय नीति की घोषणा करे. लेकिन मुंबई में बीफ बन कर देना और उसके बाद सभी विदेशियों को मीटिंग के लिए गोवा ले जाना समझ से बाहर है. आप मुंबई के अंतरराष्ट्रीय शहर की हैसियत से खिलवाड़ कर रहे हैं.

मुझे नहीं मालूम कि कांग्रेस क्या सोच रही है. उन्होंने पंजाब में चुनाव जीत लिया, तो इसका ये मतलब नहीं कि मुद्दा समाप्त हो गया. पंजाब में ईवीएम से छेड़छाड़ की थ्योरी पर बात करें, तो ये भी कहा जा सकता है कि ये संभव है कि अकाली दल ने सोचा हो कि कांग्रेस और आम आदमी पार्टी में कांग्रेस बेहतर है. लिहाज़ा, जो ईवीएम से छेड़छाड़ कर रहे हैं, उन्होंने आम आदमी पार्टी के खिलाफ कर दिया होगा. हमें सच्चाई नहीं मालूम है, ये सब अटकलों का विषय है. लेकिन मैं समझता हूं कि विपक्ष को पहला काम ये करना चाहिए कि सबको एक सुर में कहना चाहिए कि देश में चुनाव वैसे ही हों, जैसे पहले हुआ करते थे. बैलेट पेपर भले ही आधुनिक नहीं है, लेकिन हर आधुनिक तकनीक के दोनों पहलू हैं, ये तेज़ है, अधिक दक्ष है, लेकिन यदि इसमें छेड़छाड़ की सम्भावना है, तो फिर ये चुनाव नहीं है.

एक अलग प्रस्ताव रखा था, जिसमें वोटिंग मशीन से एक पर्ची भी निकलती है. मुझे तकनीक की बहुत अधिक समझ नहीं है, लेकिन सच्चाई ये है कि चुनावी प्रक्रिया में विश्वास बहाल करना ज़रूरी है. जहां तक आम जनता का सवाल है, एक बार जब नतीजे घोषित हो जाते हैं, उसे हर कोई स्वीकार कर लेता है. बांग्लादेश में विपक्ष ने चुनाव का बहिष्कार किया. वहां शेख हसीना दूसरे कार्यकाल के लिए स्वस्थ लोकतांत्रिक तरीके से नहीं चुनी गईं. लेकिन वे प्रधानमंत्री हैं, पूरी सत्ता उनके हाथ में है. हमें भारत में वो स्थिति नहीं आने देनी चाहिए. विपक्ष को पहला काम ये करना चाहिए कि वो चुनावी प्रक्रिया की प्रमाणिकता को बहाल कराने के लिए संघर्ष करे, इसके लिए भले ही उसे चुनाव आयोग के सामने रोजाना धरना देना पड़े. जो पहला मुद्दा होना चाहिए वो ये कि चुनाव ईमानदारी से हों. कौन जीतता है, कौन हारता है, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता. चुनाव में विपक्षी एकता बनती है या नहीं, ये अलग सवाल है. भाजपा हर मुमकिन कोशिश करेगी कि विपक्षी एकता नहीं बने. यदि भाजपा के खिलाफ पांच अलग-अलग पार्टियों के उम्मीदवार होंगे तो भाजपा फिर जीतेगी. विपक्ष लिहाज़ा, विपक्ष को कुछ मुद्दों पर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए. पहला, चुनावी प्रक्रिया, दूसरा गाय और तीसरा बाक़ी के मुद्दे. हालांकि बाक़ी के मुद्दे कहीं पृष्ठभूमि में चले गए हैं. कोई भी यूनिफॉर्म सिविल कोड या आर्टिकल 370 या मंदिर की बात नहीं करता. फिलहाल विपक्ष के पास कोई अहम मुद्दा नहीं है. कुछ अन्य मुद्दे हो सकते हैं, जैसे मानसून से जुड़ा कृषि क्षेत्र का संकट. यदि मानसून ख़राब हो जाता है, तो आप मुसीबत में होंगे. यदि किसानों को उचित क्रय मूल्य नहीं दिया जाता है, तो किसान फायदे में नहीं रहेगा. किसानों की आमदनी दो साल में दोगुना करने की बात करने में कोई बुराई नहीं है, लेकिन ऐसा सिर्फ दो तरीकों से हो सकता है, या तो उपज अधिक हो या सरकारी खरीद की कीमत बढ़ा दी जाए. लेकिन खरीद कीमत दोगुनी नहीं की जा सकती है. मुझे अफ़सोस के साथ कहना पड़ रहा है कि सरकारी खरीद मूल्य उतनी नहीं बढ़ी है, जितनी बढ़नी चाहिए. मध्य प्रदेश जैसे कुछ राज्य हैं, जो कृषि पैदावार की अधिक कीमत दे रहे हैं. खास तौर पर वहां उत्तर प्रदेश के झांसी और रेवा आदि क्षेत्र से अनाज इसलिए आ रहे हैं, क्योंकि वहां किसानों को अधिक कीमत मिल रही है और इसी बुनियाद पर राज्य के कृषि पैदावार का लेखा-जोखा तैयार किया जाता है. लिहाज़ा, मध्य प्रदेश अपने वास्तविक उपज से अधिक उपज दिखने में कामयाब हो रहा है. नतीजतन उत्तर प्रदेश को नुकसान हो रहा है. ये ऐसे मुद्दे हैं, जिसपर नीति आयोग, कृषि लागत एवं मूल्य आयोग को ध्यान देना चाहिए. जो भी हो, इसे नज़रंदाज़ नहीं किया जा सकता. राजू शेट्टी ने एक बार फिर ये धमकी दी है कि वे मुंबई सिटी को सब्जी, फल आदि सप्लाई करने वाले रूट पर अवरोध उत्पन्न कर देंगे. लिहाज़ा, कृषि क्षेत्र की तरफ से कुछ चिंताएं हैं. ज़ाहिर है, क़र्ज़, किसान आत्महत्या आदि की दीर्घकालिक समस्याएं बनी रहेंगी, लेकिन छोटे स्तर पर ही सही सरकार को किसानों की समस्याओं को दूर करना चाहिए. उद्योग एक दिन में नहीं लग सकते, औद्योगिक रोज़गार एक दिन में पैदा नहीं किए जा सकते. मुझे लगता है कि मौजूदा सरकार इस मामले में ठीक-ठाक काम कर रही है. इंफ्रास्ट्रक्चर विकास में समय लगेगा, लेकिन कृषि क्षेत्र समाज के रीढ़ की हड्डी है, इस ओर ध्यान दिया जाना चाहिए कि किसानों को स्थानीय स्तर पर उनके फसल की उचित कीमत मिले.

किसान मंच औरंगाबाद, नासिक और उसके आसपास के क्षेत्रों में सक्रिय है, जहां के किसानों ने ये प्रतिज्ञा की है कि वे अपनी एक एकड़ ज़मीन पर अपनी ज़रूरतों के लिए खेती करेंगे और बाकी की ज़मीन पर खेती नहीं करेंगे, क्योंकि इसमें कोई आमदनी नहीं है. यदि वाकई ऐसा होता है, तो मुंबई जैसे शहर, जहां ये सब्जियां जाती हैं, सब्जियों का अकाल आ जाएगा. किसान मंच ने इस मुद्दे को उठाया और राजू शेट्टी आगे आ कर इस मुद्दे को चर्चा में ले आए. लेकिन ये ज़रूर समझना चाहिए कि मोदी का प्रगतिशील भारत, इंफ्रास्ट्रक्चर, रोज़गार, इलेक्ट्रॉनिक, टेक्नोलॉजी, आईटी, पेटीएम की परिकल्पना तो अच्छी चीज़ें हैं. लेकिन ज़मीनी चीज़ों पर पहले ध्यान देना चाहिए, क्योंकि जिस दिन लोगों के पास खाने के लिए प्रयाप्त भोजन नहीं होगा, तो फिर बाक़ी की चीज़ें बेकार हैं. कोई आपकी इज्जत नहीं करेगा. यदि आप वापस उन्हीं दिनों में चले जाएंगे, जब आपको अमेरिका से खाद्य पदार्थ आयातित करने पड़ें, तो आप अपना आत्मसम्मान भी खो देंगे. ये एक महत्वपूर्ण विषय है. मुझे वकीन है कि सरकार और कृषि मंत्रालय इसको नजरअंदाज़ नहीं करेंगे. लेकिन ऐसी स्थिति नहीं आनी चाहिए, जब हम कृषि की कीमत पर विकास की बड़ी-बड़ी बातें करें. इससे काम नहीं चलेगा.■

feedback@chauthiduniya.com

सेना की जीप और कश्मीर

शुजात बुखारी

पिछले दो हफ्तों से कश्मीर एक हंगामे की ज़द में है. इस हंगामे की परछाईं पिछले साल की तरह 2017 की गर्मियों पर भी पड़ सकती है. ऐसा प्रतीत होता है कि बुरहान वानी के मारे जाने के कारण फैली अशांति के बाद के छह महीनों में कुछ भी नहीं बदला है. गौरतलब है कि उस घटना के बाद घाटी में ज़िन्दगी जैसे रुक सी गई थी. फ़िलहाल श्रीनगर संसदीय निर्वाचन क्षेत्र के उप-चुनाव ने जन प्रतिरोध को एक बार फिर चर्चा में ला दिया है.

इस उप-चुनाव में घाटी में हुए अब तक के सबसे कम मतदान ने प्रो-इंडिया पार्टियों की प्रासंगिकता पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया है. यहां चुनाव बहिष्कार के साथ हिंसा भी हुई. इस हिंसा में निहित संदेश बिलकुल स्पष्ट था. इसने साबित किया कि व्यवस्था के प्रति असंतोष अपने चरम पर पहुंच गया है और 'आजादी' की मांग के सुर और ऊंचे हो गए हैं. जिस चुनाव में लोग कभी बड़ी संख्या में हिस्सा लेते थे, उसी चुनाव का जिस तरह लोगों ने विरोध किया, उससे ज़ाहिर होता है कि ज़मीनी स्तर पर भारत का कितना प्रभाव बचा हुआ है. मुख्यधारा के लोग (निजी तौर पर) ये स्वीकार करते हैं कि उनके दिन पूरे होते दिख रहे हैं, क्योंकि उनके लिए मेन नैरेटिव (चाहे वो सही हों या गलत) के खिलाफ खड़ा होना मुश्किल है. वहीं दूसरी तरफ, बहिष्कार से निपटने के दौरान पुलिस, अर्धसैनिक बलों और सेना द्वारा आम नागरिकों के साथ जो व्यवहार किया जाता है, उसने स्थिति को और भी बदतर बना दिया. आठ नागरिकों के मारे जाने और कई के घायल होने ने गुस्से को और भड़काया. वहीं, वायरल हुए कुछ वीडियो ने आग में घी डालने का काम किया.

जीप का प्रभाव

एक वीडियो वायरल हुआ, जिसमें मध्य कश्मीर के बीरवाह के रहने वाले फारूक डार को सेना की एक जीप के आगे बांध कर पत्थरबाजों के खिलाफ मानव ढाल बनाकर 22 किलोमीटर तक घुमाया गया. सोशल मीडिया पर हर जगह मौजूद उस वीडियो को जब लोगों ने देखा, तो उनका गुस्सा फूट पड़ा. पूरे भारत से संतुलित विचार रखने वाले लोगों ने इस घटना की निंदा की. लेफ्टिनेंट जनरल (सेवानिवृत्त) एचएस पनाग, जो पहले उधमपुर में उत्तरी कमान का नेतृत्व कर चुके हैं, ने इस पर अपनी अप्रसन्नता ज़ाहिर करते हुए ट्विट किया कि ये वीडियो लम्बे समय तक भारतीय सेना और भारतीय राष्ट्र को कचोटती रहेगी. कुछ लोगों के लिए आत्मसम्मान की क्षति मृत्यु से भारी होती है. यहां विडंबना ये है कि जीप पर बांधे जाने से थोड़ी देर पहले ही फारूक डार ने अपना वोट डाला था.

भारतीय सेना पिछले 26 वर्षों से कश्मीर में मिलिटेंट्स का मुकाबला कर रही है. इस दौरान वो मानवाधिकारों के उल्लंघन के गंभीर आरोपों के बावजूद बीच का रास्ता तलाश करने की कोशिश करती रही है. ज्यादातर समय उसने राजनीति से दूरी बनाए रखने और लोगों के करीब आने की भरसक कोशिश की है. हालिया दिनों में उत्तरी कमान का नेतृत्व कर चुके लेफ्टिनेंट जनरल डीएस हुड्डा ने (2016 की अशांति के दौरान) सभी पक्षों को सचेत करते हुए उनसे अपने क़दम वापस खींचने की बात की थी और कहा था कि सेना अराजनैतिक है.

दरअसल, सेना की मेगा 'सद्भावना' परियोजना को राज्य के कोने कोने में लागू किया गया. सद्भावना शिविरों में लोगों के साथ सेना के घनिष्ठ संपर्क को दर्शाती दैनिक प्रेस विज्ञप्तियां जारी की गईं. अनुमानित रूप से कश्मीर में इस कार्यक्रम पर 400 करोड़ रुपए खर्च किए गए. लोगों का दिल जीतने के लिए आवंटित इन पैसों को सेना ने अपने तौर पर खर्च किया. इस परियोजना का विश्लेषण करते हुए रक्षा अध्ययन और विश्लेषण संस्थान (इडसा) की शोधकर्ता अर्पिता अनंत 2010 में इस निष्कर्ष पर पहुंची थीं कि इस परियोजना का सेना और लोगों के बीच सम्बंधों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा था. लेकिन उन्होंने यह भी कहा था कि सेना और लोगों के बीच सहजता का स्तर घाटी की तुलना में जम्मू क्षेत्र में अधिक प्रतीत हो रहा था. यह एक दिलचस्प अध्ययन होगा कि इतने पैसे खर्च करने के बावजूद सेना वांछित प्रभाव हासिल नहीं कर सकी.

यदि उस सद्भावना का लोगों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा भी था, तो जीप वाले वीडियो ने उस प्रभाव को खत्म कर दिया होगा. कुछ अन्य वीडियो क्लिप्स ने भी लोगों को विचलित किया. इनमें युवाओं के साथ मारपीट कर के और बंदूक की नोक के बल पर उनसे भारत के समर्थन और पाकिस्तान के विरोध में नारे लगाने पर मजबूर किया गया.

टीवी चैनल एक अन्य वीडियो पर बहस करते रहे, जिसमें कुछ युवा, सेंट्रल रिजर्व पुलिस बल के जवानों को धक्का देते और परेशान करते दिख रहे हैं. इस बहस में न केवल टीवी एंकर बल्कि भारत के अटॉर्नी जनरल मुकुल रोहतगी और बीजेपी के महासचिव राम माधव ने भी सुरक्षा बलों की कार्रवाई (फारूक डार को जीप के आगे बांध कर घुमाने की) को उचित ठहराया. इससे स्पष्ट हो गया कि इस कार्यप्रणाली को आधिकारिक मंजूरी मिली हुई है. दिलचस्प बात ये है कि माधव कश्मीर भाजपा के प्रभारी हैं और

भाजपा एवं पीडीपी के बीच तथाकथित गठबंधन के एजेंडे के निर्माता रहे हैं.

अब सवाल उठता है कि एक अनुशासित सेना के व्यवहार की तुलना किसी भीड़ के व्यवहार से कैसे की जा सकती है? अब तक सुरक्षा बल आखिरी उपाय के रूप में बुलेट का इस्तेमाल करते थे, लेकिन इन वीडियो ने उनके आचरण से पर्दा हटा दिया है. इन वीडियो (जो कथित तौर पर सेना द्वारा शूट किए गए थे) को लीक कर क्या संदेश दिया गया? दरअसल, ये आचरण सदभावना के तर्क को निरस्त कर देता है. काबिले गौर बात ये है कि जिस बीएसएफ जवान ने सुरक्षा बलों के साथ अनुचित व्यवहार का वीडियो (खराब खाने को लेकर तेजबहादुर यादव द्वारा जारी किया गया वीडियो) जारी किया था, उसे सेवा से बर्खास्त कर दिया गया, लेकिन इस मामले में जिन लोगों ने वीडियो जारी किए, उनका बचाव किया जा रहा है. इसका मतलब है कि लोगों को ये स्पष्ट सन्देश दिया गया कि उनके साथ कैसा व्यवहार किया जा सकता है.

क्या सेना अपने नागरिकों का दिल और दिमाग जीतने में नाकाम होने के बाद इस हद तक जा रही है? सेना मिलिटेंट्स की एक संख्या को मार गिराने में सक्षम हो सकती है, लेकिन आम युवाओं के बीच जो विचारधारा परवान चढ़ रही है, वो मिलिटेंट्स की तुलना में अधिक शक्तिशाली है. इस सोच को बलपूर्वक नहीं मारा जा सकता, क्योंकि इसका एक मजबूत राजनीतिक संदर्भ है. ये एक राजनैतिक समस्या है, जिससे राजनैतिक तौर पर निपटने की जरूरत है. कश्मीर को नियंत्रित करने के लिए नई दिल्ली सेना को एक हथियार की तरह इस्तेमाल कर रही है, लेकिन ये कारगर साबित नहीं हुआ. वीडियो की घटना से ये जाहिर होता है कि सेना अपने तरीकों में भी विफल रही है. अपने इस आचरण से वो कश्मीर में असफल रही ही है, नई दिल्ली को भी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कमजोर बना दिया है.

मिलिटेंसी में उछाल

सरकार के सामने आम गुस्से को नियंत्रित करने की चुनौती है, लेकिन बढ़ता हुआ आतंकवाद इसके लिए ईंधन का काम कर रहा है. पिछले दिनों विद्यार्थियों द्वारा किया गया विरोध ये साबित करता है कि गुस्सा अब एक व्यवस्थित आकार ले रहा है. हालिया दिनों में केवल छात्र ही मारे गए हैं और वे ही सड़कों पर विरोध भी करते हैं. उन्होंने मिलिटेंट्स का दर्जा हासिल कर लिया है. राजनैतिक संघर्ष ने उनकी सोच पर गहरा प्रभाव डाला है.

शायद अलगाववादी नेता जो इस आंदोलन का नेतृत्व कर रहे हैं, उन्हें नहीं मालूम है कि वे किस दिशा में बढ़ गए हैं. जिस तादाद में युवा मिलिटेंसी अपना रहे हैं, वो खतरनाक है. पहले मिलिटेंसी में विदेशियों और स्थानीय लोगों का अनुपात 70:30 था, लेकिन अधिकारियों के मुताबिक आज यह आंकड़ा उलट गया है. आधिकारिक सूत्रों ने बताया कि 2010 में मिलिटेंसी में शामिल होने वाले युवाओं की संख्या 54 थी. 2011 में ये घटकर 23 हो गई और 2012 और 2013 में क्रमशः 21 और 16 रह गई. लेकिन ये संख्या 2014 में 53, 2015 में 66 और 2016 में 88 तक पहुंच गई. सूत्रों के मुताबिक मार्च 2017 तक 19 लड़कों ने मिलिटेंसी ज्वाइन कर ली है. सुरक्षा अधिकारियों ने स्वीकार किया है कि इस सन्दर्भ में अफजल गुरु की फांसी एक महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुई है.

नई दिल्ली ये मनाने को तैयार नहीं है कि कश्मीर में राजनीतिक प्रक्रिया का अभाव है. ये जानने के लिए कि आगे क्या हो सकता है, सामाजिक स्तर पर कोई प्रयास नहीं किया जा रहा है. कश्मीर के युवाओं को हिंसा की भट्ठी में कब तक फेंका जाता रहेगा और क्या उसकी तरफ उन्हें धकेलना हमारे हित में है? नागरिक समाज और राजनीतिक नेतृत्व इस पर चुप हैं. राजनैतिक मुद्दों के हल की लड़ाई काफी लंबी है और जब तक उसे दिशा देने के लिए गहन सोच-विचार नहीं होगी, तब तक परिणामों की कल्पना मुश्किल नहीं है. सेना और अन्य सुरक्षा बलों द्वारा कश्मीर को अपमानित किए जाने की केवल निंदा ही की जा सकती है. ये वीडियो दिखाते हैं कि लड़ाई हारी जा चुकी है. हो सकता है कि यही हमारा भाग्य हो, लेकिन हमें निश्चित रूप से सुनिश्चित करने की कोशिश करनी चाहिए कि कोई और जान न जाए.■

-लेखक राइजिंग कश्मीर के संपादक हैं.

feedback@chauthiduniya.com

संतोष भारतीय

जब तोप मुक़ाबिल हो

कश्मीर समस्या का समाधान प्रधानमंत्री के हाथों में है

पूरा एक वर्ष बीत गया और हमारे प्यारे प्रधानमंत्री कश्मीर के सवाल पर बिल्कुल खामोश रहे. उन्होंने न कोई मीटिंग बुलाई, न कोई वक्तव्य दिया और न ही अपने दिमाग का इशारा दिया. पिछले अक्टूबर के बाद कश्मीर की सरकार भी बिल्कुल निश्चिंत हो गई और उसने भी कोई कदम नहीं उठाया. जब हम कश्मीर की सरकार कहते हैं, तो उसमें भारतीय जनता पार्टी और पीडीपी दोनों के मंत्रियों की बात कहते हैं, लेकिन महबूबा मुफ्ती खुद खामोश रहीं. उन्होंने कोई कोशिश नहीं की. उन्होंने ज्यादातर समय जम्मू में बैठकर अपनी सरकार चलाई और भविष्य की योजनाएं बनाई. जम्मू–कश्मीर के राजनेता कुछ चुनाव की तैयारियों में व्यस्त रहे. केंद्र सरकार से सामूहिक तौर पर बात करने के लिए उन्होंने कोई मीटिंग नहीं की और हुर्रियत कॉन्फ्रेंस के नेताओं के हाथ में तो कुछ था भी नहीं. उनकी बात न मुख्यमंत्री सुन रही थीं और न प्रधानमंत्री. खुद गिलानी साहब की तबीयत खराब रही और वो मोर्चा बिल्कुल खामोश रहा.

जम्मू–कश्मीर में बाहर से जो भी लोग गए, जिनमें कमल मोरारका की टीम, यशवंत सिन्हा की टीम, सीमा मुस्तफा के साथी तथा वो सारे पत्रकार जो जम्मू–कश्मीर से अपने को जुड़ा मानते हैं, उन सबने ये कोशिश की कि नवंबर 2016 से मार्च 2017 के बीच का समय, कश्मीर के लोगों से बातचीत की प्रक्रिया शुरू करने में लगाई जाए. बातचीत की प्रक्रिया किसी तरह शुरु हो. लेकिन उनकी आवाज न सरकार ने सुनी और न देश के मीडिया ने. देश के मीडिया से हमारा मतलब देश के टेलीविजन चैनलों से है, जो इस समय भारत सरकार के प्रधानमंत्री कार्यालय और रक्षा मंत्रालय का रोल निभाने की कोशिश कर रहे हैं. वो देश के मसलों पर बिना उसका परिणाम जाने फैसला कर लेते हैं और उसके बाद अचानक युद्ध छेड़ देते हैं. नवंबर से लेकर मार्च तक वो भी बिल्कुल खामोश रहे. अब फिर उनके गरजने और बरसने का मौसम आ गया है.

इस बीते समय को अनदेखा करना शायद भारतीय राज्य के लिए बहुत मुश्किलें पैदा करने वाला है. कश्मीर के लोगों को फिर यह संदेश गया कि हम न उनकी समस्याएं जानना चाहते हैं, न उनसे बात करना चाहते हैं और न उन्हें किसी तरह की न्यूनतम आजादी देना चाहते हैं, जो मुंबई, कोलकाता, पटना, चेन्नई या दिल्ली में उपलब्ध है. हमने उन्हें यही संदेश दिया कि हम प्रशासनिक तौर पर कश्मीर का सख्ती से सामना करेंगे. सरकार किसी भी लोकतांत्रिक तरीके को नहीं अपनाना चाहती. इस बीच उत्तर प्रदेश के चुनाव हो गए और चुनाव से पहले भारत को नया सेनाध्यक्ष मिल गया. सेनाध्यक्ष बनते ही जनरल रावत ने कश्मीर को लेकर बयान दिया कि पत्थर का जवाब गोली से दिया जाएगा. भारत में एक नई प्रवृत्ति पैदा हुई है कि संस्थाओं के प्रमुख, चाहे वो सेना हो या दूसरी संस्थाएं, राजनीतिक बयान देते हैं और ये बिना सोचे–समझे देते हैं कि उन बयानों का राष्ट्रीय–अंतरराष्ट्रीय स्तर पर क्या असर पड़ने वाला है.

जब नोटबंदी हुई थी, तब बहुत जोर–शोर से यह दावा किया गया था कि इसकी वजह से अब जम्मू–कश्मीर में पत्थरबाजी की घटनाएं रुक जाएंगी, आतंकवाद रुक जाएगा, क्योंकि उनके पास पुराने नोट हैं. नए नोटों का वितरण इस तरह से होगा कि ये पैसे आतंकवादियों और पत्थर फेंकने वालों के हाथों में नहीं पहुंच पाएंगे. सरकार का ये निश्चित मानना था और उसने देश को यही बताया कि दस–पंद्रह हजार रुपए महीने की तनख्वाह पर पत्थर फेंकने वाले हाथ पत्थर उठाते हैं. देश के एक तेज टेलीविजन चैनल ने एक स्टिंग ऑपरेशन भी किया, जिसमें एक लड़का कह रहा था कि हां, मैं पंद्रह हजार रुपए लेकर पत्थर मारता हूं. ये अलग बात है कि वो लड़का चारों तरफ कश्मीर में खुला घूम रहा है और कह रहा है कि मैंने उसमें ये बात नहीं कही. लेकिन जैसा होता है, अब पत्रकारिता भोंपू का काम करती है. जनता की आवाज या छुपी हुई घटनाओं को सामने लाने का काम कम करती है.

अब अचानक कश्मीर में फिर से पत्थरबाजी शुरू हो गई है और जिन हाथों ने पत्थर उठाए हैं, वो हाथ स्कूली छात्रों के हैं. जो तस्वीरें सामने आई हैं, उनमें कंधे पर स्कूल बैग लादे हुए बच्चे पत्थर चला रहे हैं. जो सबसे हैरतअंगेज लाइव फुटेज सामने आई है, उनमें लड़कियां पत्थर चला रही हैं. बच्चों के हाथों में फिर से पत्थरों का पहुंच जाना, क्या इतने बच्चों को पंद्रह हजार रुपए महीने की नौकरी का मिल जाना है. बच्चों के हाथों में पत्थरों का पहुंच जाना, क्या पाकिस्तान का कश्मीर में प्रभाव का बढ़ना है. बच्चों के हाथों में फिर पत्थरों का पहुंच जाना, क्या भारतीय गणराज्य से खुली बगावत का पहला चरण है या ये एक नया संदेश है कि प्रधानमंत्री जी अब अपना कुछ वक्त गुजरात के चुनावों में जाने से पहले देश की समस्याओं के लिए निकालें और कश्मीर में बातचीत का सिलसिला शुरू कराएं. मैं शुरू से ही लिखता रहा हूं कि कश्मीर में अगर कोई शुरुआत कर सकता है तो वो सिर्फ और सिर्फ प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी कर सकते हैं. ठीक वैसे ही, जैसे जब वो पहली बार कश्मीर गए थे तो उन्होंने जम्हूरियत, कश्मीरियत, इंसानियत की बात कही थी और ये वो भाषा थी, जो भूतपूर्व प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी ने कश्मीर को सुनाई थी, जिससे कश्मीर ने उनके ऊपर भरोसा किया. इतने महीनों के अंतराल के बाद

> **अचानक कश्मीर में फिर से पत्थरबाजी शुरू हो गई है और जिन हाथों ने पत्थर उठाए हैं, वो हाथ स्कूली छात्रों के हैं. जो तस्वीरें सामने आई हैं, उनमें कंधे पर स्कूल बैग लादे हुए बच्चे पत्थर चला रहे हैं. जो सबसे हैरतअंगेज लाइव फुटेज सामने आई है, उनमें लड़कियां पत्थर चला रही हैं. बच्चों के हाथों में फिर से पत्थरों का पहुंच जाना, क्या इतने बच्चों को पंद्रह हजार रुपए महीने की नौकरी का मिल जाना है. बच्चों के हाथों में पत्थरों का पहुंच जाना, क्या पाकिस्तान का कश्मीर में प्रभाव का बढ़ना है. बच्चों के हाथों में फिर पत्थरों का पहुंच जाना, क्या भारतीय गणराज्य से खुली बगावत का पहला चरण है या ये एक नया संदेश है कि प्रधानमंत्री जी अब अपना कुछ वक्त गुजरात के चुनावों में जाने से पहले देश की समस्याओं के लिए निकालें और कश्मीर में बातचीत का सिलसिला शुरू कराएं.**

जम्मू–कश्मीर की मुख्यमंत्री महबूबा मुफ्ती दिल्ली आईं, प्रधानमंत्री से मिलीं. उन्होंने फिर वही भाषा दोहराई कि हमें वहीं से प्रारम्भ करना होगा, जहां से अटल बिहारी वाजपेयी ने छोड़ा था, लेकिन क्या महबूबा मुफ्ती को ये नहीं सोचना चाहिए कि मुफ्ती साहब ने जहां से छोड़ा था, वहां से उन्हें भी शुरुआत करनी चाहिए. मुफ्ती साहब जैसी कुशलता का इस्तेमाल न करना भी कश्मीर में लोगों के दुख–दर्द को बढ़ाने का एक प्रमुख कारण रहा है. दिल्ली में बहुत सारे ऐसे लोग हैं, जिनका मानना है कि जम्मू–कश्मीर में ज्यादती हो रही है और वो ज्यादती कश्मीर के लोगों को भारत से निराश कर रही है, उन्हें फिर से आजाद मुल्क की मानसिकता की तरफ मोड़ रही है. इस सोच का कोई मुकाबला भारत की सरकार नहीं करना चाहती. कहीं ऐसा तो नहीं है कि भारत सरकार सारी चीजों को इतना बिगड़ने देना चाहती हो कि वो सचमुच सुरक्षाबलों की बनाई हुई नीति को अपनाना अवश्यंभावी मान रही हो, जिसमें लोगों का मुकाबला, लोगों के असंतोष का मुकाबला और बच्चे, चाहे वो लड़के हों या लड़कियां, उनके हाथों से निकले पत्थर का मुकाबला गोली से करना चाहती हो. मुझे नहीं लगता कि ऐसा होगा, पर घटनाएं बताती हैं कि स्थिति उसी तरफ जा रही है.

भारत के राजनीतिक दल कश्मीर के सवाल पर असहाय खड़े हैं. उन्हें लगता है कि अगर वो कश्मीर के सवाल पर कुछ भी बोलेंगे, तो उन्हें देशद्रोही मान लिया जाएगा. इन दिनों देश में एक नया माहौल बनाया गया है कि अगर आप गाय, भारत माता और कश्मीर को लेकर कुछ भी कहते हैं, तो या तो आप देशद्रोही हैं या देशप्रेमी हैं. अगर आप कश्मीर में लोगों के साथ सख्ती बरतने, लाठीचार्ज करने, आंसू गैस छोड़ने या गोली चलाने को सही ठहराते हैं तो आप देशप्रेमी हैं, अन्यथा आप देशद्रोही हैं. शायद इस माहौल में भारत के राजनीतिक दल या भारत के नेता कुछ भी कहने से बच रहे हैं. ऐसे माहौल में ये पता चलता है कि देश में जयप्रकाश नारायण, डॉक्टर राममनोहर लोहिया, अटलबिहारी वाजपेयी, वीपी सिंह, चंद्रशेखर के न होने का क्या मतलब है. इसके मायने लोकतंत्र की बुनियाद तक पहुंचते हैं. मैं जानता हूं कि आदरणीय प्रधानमंत्री के कानों तक मेरी आवाज नहीं पहुंचेगी. पर मैं फिर भी प्रधानमंत्री जी से साग्रह निवेदन कर रहा हूं कि वो तत्काल कश्मीर के लोगों की आवाज सुनने के लिए कोई प्रक्रिया शुरू करें. जिस तरह से वो चुनाव अभियान अपने हाथ में लेते हैं और विजय पर विजय प्राप्त कर रहे हैं, उसी तरह वो कश्मीर के सवाल को भी अपने हाथ में लें और कश्मीर के लोगों के दिलों को जीतने का एक अभियान शुरू करें. आशा है कि प्रधानमंत्री एक साधारण पत्रकार की इस विनती पर गौर करेंगे.■

editor@chauthiduniya.com

आर या पार

बाबरी मस्जिद मामला : आंशिक स्वागत वाला अदालती फ़ैसला

परंजय गुहा ठाकुरता

सुप्रीम कोर्ट ने सत्ताधारी भारतीय जनता पार्टी के लिए एक अनुकूल कार्य किया है. इसने यह सुनिश्चित कर दिया है कि अयोध्या में विवादित जमीन पर राम मंदिर बनाने का मुद्दा जीवित रहे. सुप्रीम कोर्ट ने केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो यानी सीबीआई को 25 साल पुराने मामलों को एक साथ करके इसकी सुनवाई लखनऊ के अदालत में करने का निर्देश दिया है. जिन लोगों पर मुकदमा चलाया जाना है, उनमें भाजपा नेता लालकृष्ण आडवाणी, मुरली मनोहर जोशी और उमा भारती शामिल हैं. इन पर 16वीं सदी की बाबरी मस्जिद को ढहाने के लिए साजिश करने का आरोप है. लेकिन इस फैसले का एक अनचाहा पक्ष यह है कि भाजपा इसका इस्तेमाल अपने सांप्रदायिक एजेंडे को आगे बढ़ाने के लिए करेगी, ताकि हिंदू वोट बैंक 2019 के आम चुनावों में उसके साथ आ जाए.

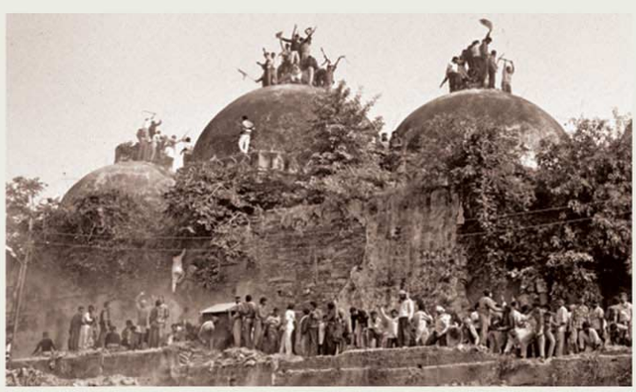

इसके अलावा सुप्रीम कोर्ट के निर्णय की आख़िर और कैसे व्याख्या की जा सकती है? 6 दिसंबर, 1992 को सैकड़ों कारसेवक अयोध्या की बाबरी मस्जिद पर चढ़ गए और उन्होंने पुलिस, मीडिया और हौसला बढ़ा रहे नेताओं के सामने अपनी योजना के मुताबिक इसे ढहा दिया. जो दो प्राथमिकी दर्ज हुईं, उनमें एक आडवाणी के खिलाफ थी और दूसरी लाखों अनाम कारसेवकों के खिलाफ. लेकिन मामला वहीं का वहीं बना रहा. इन दो मामलों की स्थिति हमारी न्याय व्यवस्था की सड़न को उजागर करने वाली है. फिर भी कम से कम एक मामले में सुप्रीम कोर्ट का निर्णय एक अहम हस्तक्षेप है. अदालत ने यह कहा है कि दो अलग–अलग मामलों को एक साथ मिलाया जाए. इनमें एक की सुनवाई रायबरेली में चल रही थी और दूसरी की लखनऊ में. अब इनकी सुनवाई लखनऊ में होगी. अदालत ने कहा है कि दो साल के अंदर सुनवाई पूरी हो और इस बीच अनावश्यक तरीके से जजों का स्थानांतरण नहीं किया जाए. ऐसा करके अदालत ने न्यायतंत्र में व्याप्त व्यवस्थागत ख़ामियों से इस मामले को बचाने की कोशिश की है.

इसके लिए हम आंशिक तौर पर सराहना कर सकते हैं, क्योंकि इस निर्णय से आपराधिक न्याय तंत्र में व्याप्त गंभीर समस्याओं का समाधान नहीं होता. हजारों मुकदमे ऐसे हैं, जो इस न्यायतंत्र में उलझ कर रह जा रहे हैं. कहीं तारीख पर तारीख मिल रही है तो कहीं न्यायिक अधिकारियों को बार–बार बदलने से परेशानी हो रही है. वहीं सरकारी वकीलों की लापरवाही और गवाहों की सुरक्षा की कोई व्यवस्था नहीं होने से गवाहों का मुकरना बेहद आम हो गया है. जब तक इन समस्याओं का समाधान नहीं होता, तब तक सुप्रीम कोर्ट का हालिया हस्तक्षेप अपवाद ही माना जाएगा.

यहां इस बात पर भी ध्यान देने की जरूरत है कि सुप्रीम कोर्ट का यह आदेश अपने आप में पहला नहीं है. 2004 में बेस्ट बेकरी मामले में सुप्रीम कोर्ट ने मामले को गुजरात से महाराष्ट्र के एक फास्ट ट्रैक कोर्ट में भेजने का आदेश दिया था. यह मुकदमा 2002 के गुजरात दंगों के दौरान बड़ोदरा में 14 लोगों की हत्या से संबंधित था. उस वक्त अदालत ने यह फैसला गुजरात के माहौल को देखते हुए किया था, क्योंकि राज्य सरकार की मशीनरी न्याय दिला पाने में असमर्थ दिख रही थी. उस वक्त अदालत ने कहा था कि यह उसके अधिकार क्षेत्र में है कि तकनीकी बातों में उलझे बगैर सच तक पहुंचने की वह व्यवस्था करे. ऐसे ही एक तकनीकी पेंच में बाबरी मस्जिद मामला 1997 में फंस गया था. उस वक्त इलाहाबाद हाई कोर्ट ने यह आदेश दिया था कि दोनों मामलों की सुनवाई एक अदालत में कराने के बजाए दो अलग–अलग अदालतों रायबरेली और लखनऊ में हो. अदालती निर्णय की वजह से यह मामला एक बार फिर से सामने आ गया है. ऐसे में हम इस बात का मूल्यांकन करने की कोशिश कर सकते हैं कि बाबरी मस्जिद विध्वंस का बीते 25 साल में भारत के लिए क्या मतलब रहा है? 1990 में आडवाणी की रथ यात्रा शुरू हुई. मुद्दा राम मंदिर था. इसका नतीजा दिसंबर, 1992 में बाबरी विध्वंस के तौर पर सामने आया. इसने भारत को सांप्रदायिक ध्रुवीकरण के रास्ते पर धकेल दिया. हिंदुत्व दस्ता का हौसला बढ़ता गया और 2014 में भाजपा ने लोकसभा चुनावों में स्पष्ट जीत हासिल की. इसी साल पांच राज्यों के विधानसभा चुनावों के नतीजे यह बता रहे हैं कि यह स्थिति अभी बदली नहीं है. इस बीच 1992 में मुंबई में दंगे हुए और गुजरात में 2002 में. इन सबसे अल्पसंख्यकों के बीच यह बात घर कर गई कि भारत में उनके साथ समानता का व्यवहार नहीं हो पाएगा. 2014 के बाद तो यह चीज और तेजी से बढ़ी और अल्पसंख्यक लगातार खुद को असुरक्षित महसूस करने लगे.

ऐसा संभव नहीं लग रहा कि अदालत के आदेश के बाद भाजपा नेताओं की नींद उड़ गई होगी. बल्कि इसके उलट सच्चाई तो यह है कि इस अदालती निर्णय का इससे अनुकूल वक्त नहीं हो सकता था. उमा भारती के बयानों से यह स्पष्ट हो जाता है. अगर अदालत आडवाणी और दूसरे नेताओं को दोषी ठहरा भी देती है तो भी उन्हें चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि ऊपर की अदालतों में इसे चुनौती देने का विकल्प उनके लिए खुला रहेगा. अगर उन्हें बरी कर दिया जाता है, तो भाजपा को फायदा ही फायदा है. सच्चाई तो यह है कि सांप्रदायिकता का जिस तरह का माहौल बना हुआ है, उसमें किसी भी निर्णय का फायदा चुनावी लाभ के लिए उठाया जा सकता है.

आजादी के बाद भारत ने सांप्रदायिक तनाव की कई स्थितियों को देखा है. लेकिन 6 दिसंबर, 1992 की घटना इन सबमें बिल्कुल अलग थी, क्योंकि इसने हिंदुत्व की ऐसी राजनीति को मजबूती दी, जो दिनोंदिन और मजबूत हो रही है. अभी से दो साल बाद लखनऊ की अदालत से आने वाला फैसला इस प्रक्रिया में एक पड़ाव मात्र होगा.■

(लेखक इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली के संपादक हैं.)

feedback@chauthiduniya.com

चम्पारण सत्याग्रह समारोह: टुकड़ों में बंटे गांधी

गांधीवाद की मार्केटिंग कर अपनी ब्रांडिंग में लगे राजनेता

राकेश कुमार

चम्पारण सत्याग्रह को सौ वर्ष पूरे हो गए हैं. 10 अप्रैल 1917 को पहली बार मोहनदास करमचंद गांधी बिहार की राजधानी पटना पहुंचे थे और मुजफ्फरपुर होते हुए 15 अप्रैल को चम्पारण आए थे. मकसद था निलही कोठियों, सामंतों और अंग्रेजों के अत्याचार से कराहते किसानों-मजदूरों की दयनीय स्थिति को देखना और इससे निजात दिलाना. गांधी जी ने किसानों-मजदूरों पर हो रहे अत्याचार के विरोध में पहली बार सत्याग्रह का शंखनाद किया था. चम्पारण सत्याग्रह के सौ वर्ष पूरे होने पर स्मृति समारोह मनाया जा रहा है, जो पूरे वर्ष चलेगा. राज्य सरकार और केन्द्र सरकार की ओर से अलग-अलग कार्यक्रम किए जा रहे हैं. इन समारोहों पर करोड़ों रुपए खर्च किए जा रहे हैं. गांधी और गांधीवाद की मार्केटिंग कर सभी अपनी राजनीतिक रोटियां सेंक रहे हैं, लेकिन चम्पारण सत्याग्रह के सौ वर्ष पूरे होने के बाद भी अगर चम्पारण में ही मजदूर-किसान को आत्मदाह करना पड़ रहा है तो यह निश्चय ही दुखद और शर्मनाक है. 10 अप्रैल को जिस दिन गांधी जी पटना पहुंचे थे, एक सौ वर्ष बाद ठीक उसी दिन मोतिहारी चीनी मिल के दो मजदूर सत्याग्रहियों ने आत्मदाह का प्रयास किया. इस घटना ने एकबारगी सभी को झकझोर दिया है कि क्या सत्याग्रह के एक सदी बाद भी मजदूर-किसानों की स्थिति और बदतर हुई है.

किसान-मज़दूरों की स्थिति से द्रवित होकर गांधी ने किया था सत्याग्रह

चम्पारण में नीलहे साहबों का अत्याचार 1757 से ही बदस्तूर जारी था, जिसका अंत 1917 के चम्पारण सत्याग्रह के बाद हुआ. तब किसान दो पाटों के बीच पीस रहे थे. एक तो सामंती व्यवस्था और दूसरे नीलही कोठियों के अत्याचार से किसान त्राहिमाम कर रहे थे. तीन कठिया प्रणाली के कारण छोटे किसान खेतिहर मजदूर बन गए थे. 1900 ई. के बाद नीलही कोठियों को नील के व्यापार में घाटा होने लगा था, क्योंकि जर्मनी के कृत्रिम नील रंग के कारण भारत के नील की मांग घट गई थी. इसके बाद जमीन के रैयतों से लगान के अतिरिक्त 46 प्रकार के टैक्स जबरन वसूले जाने लगे. हुण्डा, हरजाना, शहरवेशी, पैन खर्च, बैटमाफी, हलबन्दी, सलामी तीन कठिया लगान, बांध बेहरी, वपही-प्रतही, मडवन, सगही, कोल्हुआवा, चुल्हिया सहित 46 प्रकार के टैक्स के कारण रैयतों की स्थिति दयनीय हो गई थी. घर में चूल्हा बनाने से लेकर पर्व त्योहारों पर भी टैक्स वसूले जाने लगे. किसान अपनी मर्जी से खेती भी नहीं कर सकता था. रैयत कहने को किसान थे, लेकिन उनकी स्थिति गुलामों से भी बुरी थी. तब मोतिहारी सबडिविजन में ही केवल 33 और बेतिया में 28 नीलही कोठियां थीं. चम्पारण के किसानों की दुर्दशा किसान राजकुमार शुक्ल और बाबू लोमराज सिंह ने गांधी जी को सुनाई और चम्पारण आने का न्योता दिया. गांधी जी 16 अप्रैल को किसानों की स्थिति का जायजा लेने मोतिहारी से जसौली पट्टी जा रहे थे कि तभी रास्ते में चन्द्रहिया में अंग्रेज कलक्टर हेकॉक ने नोटिस देकर जिला छोड़ने का फरमान जारी कर दिया. 18 अप्रैल को उनकी पेशी हुई और गांधी जी ने सत्याग्रह का शंखनाद किया. सत्य और अहिंसा के शस्त्र का प्रभाव हुआ. अंग्रेज सरकार ने तीन कठिया प्रथा को गैरकानूनी घोषित कर दिया और गैर कानूनी ढंग से वसूले जाने वाले सभी टैक्स को वापस करने का फरमान सुनाया.

किसानों-मज़दूरों की दशा आज भी बदतर

गौर करने वाली बात यह है कि सत्याग्रह शताब्दी वर्ष पर करोड़ों रुपए खर्च कर गांधीवाद के नाम पर अपनी ब्रांडिंग करने वाले केंद्र और राज्य सरकार के नेताओं ने गांधी के सत्याग्रह के मूल भाव को ही नजरअंदाज कर दिया है. अपने वेतन के बकाये लगभग 60 करोड़ रुपए के भुगतान, किसानों के गन्ने का बकाया लगभग 70 करोड़ और चीनी मिल खोलने के लिए एक दशक से सत्याग्रह कर रहे किसान-मजदूरों की आवाज केंद्र और राज्य सरकार के नुमाइंदों तक नहीं पहुंच सकी. प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री से लेकर सांसद, मंत्री, विधायक, जिलाधिकारी तक अपनी मांगों को बुलंद करने वाले सत्याग्रही मिल-मजदूरों और किसानों के सब्र का बांध टूट गया और आत्मदाह जैसी घटना सामने आई, लेकिन सवाल ये है कि इसके जिम्मेवार कौन हैं?

चम्पारण सत्याग्रह शताब्दी वर्ष स्मृति समारोह को लेकर निश्चय ही चम्पारण के लोगों में काफी उत्साह था, लेकिन राज्य और केंद्र के नेताओं के आपसी वैमनस्य को देख कर बुद्धिजीवियों को निराशा ही हाथ लगी. केन्द्र प्रायोजित कार्यक्रमों में महागठबंधन का कोई भी नेता नजर नहीं आया, वहीं राज्य सरकार के समारोह से भाजपाइयों ने किनारा कर लिया. आपसी प्रतिद्वंदिता ऐसी दिखी, जैसे चुनावों में होता है. केन्द्र के समारोह में भीड़ जुटाने का जिम्मा भाजपा नेताओं और कार्यकर्ताओं का था, तो राज्य सरकार की ओर से भीड़ जुटाने में प्रशासन के पसीने छूट रहे थे.

किसानों-मजदूरों पर अत्याचार बदस्तूर जारी है. 10 अप्रैल को मोतिहारी के हनुमान शुगर मिल के दो मजदूर नरेश श्रीवास्तव और सूरज बैठा का आत्मदाह भी इसी गठजोड़ का नतीजा है. 2002 से बन्द चीनी मिलों के किसान-मजदूर अपने बकाये और वेतन की मांग को लेकर लड़ रहे हैं. आत्मदाह की घटना कोई अप्रत्याशित नहीं थी. लंबे समय से आन्दोलन चल रहा था. विगत वर्ष मुख्यमंत्री चम्पारण दौरे के समय मजदूरों से चीनी मिल गेट पर जाकर मिले थे और समस्या सुलझाने का आश्वासन भी दिया था. स्थानीय सांसद राधामोहन सिंह देश के कृषि और किसान कल्याण मंत्री भी हैं. उनसे भी मजदूरों ने कई बार अपनी फरियाद सुनाई. यहां तक कि लोकसभा चुनाव के दौरान चुनावी सभा से नरेन्द्र मोदी ने भी घोषणा करते हुए कहा था कि अगर चुनाव जीता तो अगली बार इसी शुगर मिल की चीनी की चाय पिउंगा. केन्द्र में भाजपा की सरकार बनी, पर कुछ नहीं हुआ. इस गठजोड़ के कारण ही किसानों-मजदूरों का हक मारने वाले चीनी मिल मालिकों ने बैंकों को भी करोड़ों रुपए की चपत लगाई. एक ही मिल पर अलग-अलग नाम से उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक सहित तीन बैंकों से करोड़ों रुपए का कर्ज उठा लिया.

आश्चर्यजनक बात तो यह है कि मजदूरों की मौत के बाद केन्द्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री राधामोहन सिंह, केन्द्रीय रसायन उर्वरक एवं संसदीय कार्य मंत्री अनन्त कुमार, कौशल विकास मंत्रालय के राज्यमंत्री राजीव प्रताप रूढ़ी सहित मुख्यमंत्री नीतीश कुमार चम्पारण सत्याग्रह शताब्दी स्मृति समारोह में भाग लेने आ चुके हैं, लेकिन किसी ने चीनी मिल की घटना पर एक शब्द भी बोलना मुनासिब नहीं समझा. लेकिन किसानों का शुभचिंतक बनने के लिए प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी को यह चुनावी वादा याद दिलाना नहीं भूले कि उन्होंने किसानों को उत्पादन खर्च पर 50 फीसदी लाभ जोड़ कर अनाज के न्यूनतम समर्थन मूल्य देने की घोषणा की थी. केंद्र सरकार की ओर से केन्द्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री राधामोहन सिंह के नेतृत्व में सत्याग्रह शताब्दी वर्ष समारोह का आयोजन हुआ. यह समारोह 13 से 19 अप्रैल तक मोतिहारी के जिला स्कूल मैदान में आयोजित हुआ. इस मौके पर किसान कुंभ मेला, रोजगार मेला का आयोजन किया गया. कई मोतीझील की सफाई कराने, प्लास्टिक इंजीनियरिंग संस्थान खोलने सहित बड़ी-बड़ी घोषणाएं की गईं, परन्तु चीनी मिल प्रकरण अछूता ही रहा.

मज़दूरों की मौत पर राजनीति

मजदूरों की मौत पर सियासी पारा गरम है. भाजपाइयों ने राज्य सरकार के विरोध में धरना-प्रदर्शन और मुख्यमंत्री का पुतला दहन किया तो महागठबंधन के लोगों ने केन्द्र का विरोध करते हुए धरना दिया. स्थानीय विधायक प्रमोद कुमार, जो कभी मजदूरों के हक की लड़ाई लड़ने का दावा करते रहे हैं, ने पूरे प्रकरण से पल्ला झाड़ लिया और मजदूरों के बकाया भुगतान नहीं कराने में राज्य सरकार को जिम्मेदार बता दिया. उन्होंने कहा कि केन कंट्रोल एक्ट के तहत चीनी मिल चालू कराने के लिए अधिग्रहण का अधिकार राज्य सरकार को है, जबकि जदयू और भाजपा की साझा सरकार के समय भी यह मुद्दा ज्वलंत था और तब भी प्रमोद कुमार विधायक थे. हालांकि चुनाव के दौरान सभी पार्टियां चीनी मिल को मुद्दा बनाती रही हैं. वहीं राजद के जिलाध्यक्ष सुरेश यादव के नेतृत्व में प्रदर्शन किया गया और केंद्र सरकार के विरुद्ध नारेबाजी की गई. प्रधानमंत्री और कृषि मंत्री का पुतला दहन किया गया. राजद के लोकसभा प्रत्याशी विनोद श्रीवास्तव ने कहा कि केंद्र सरकार ने कभी मिल खुलवाने की कोशिश ही नहीं की. उन्होंने कृषि मंत्री को हटाने की मांग की. उधर कृषि मंत्री राधामोहन सिंह ने भी इस घटना का जिम्मेवार राज्य सरकार को बताया. राजनीति गरमाती रही, लेकिन किसी ने भी मृतक नरेश श्रीवास्तव और सूरज बैठा के परिजनों के झिश कुछ भी नहीं किया. 10 अप्रैल को आत्मदाह के प्रयास के बाद 12 की अहले सुबह नरेश श्रीवास्तव की मौत हो गई थी, वहीं दूसरे घायल सूरज बैठा की मौत 19 अप्रैल को हो गई.

जितनी पार्टी, उतने गांधी

सत्याग्रह शताब्दी समारोह मनाने वालों ने न केवल सत्याग्रह के कारणों और मूल तत्वों को ही भुला दिया, बल्कि गांधी को भी टुकड़ों में बांट कर अपमानित किया. सत्याग्रह के इतिहास को नाटकीय रूप देकर युवा वर्ग को सत्याग्रह का पाठ पढ़ाने के प्रयास में केंद्र और राज्य के समारोहों में अलग-अलग गांधी देखे गए. मुजफ्फरपुर में भी गांधी जी के क्रियाकलापों को नाट्य रूप में प्रस्तुत किया गया. 15 अप्रैल को गांधी जी को रेलगाड़ी से मोतिहारी आना था, लेकिन मुजफ्फरपुर के गांधी जी को राज्य सरकार का गांधी मानकर ट्रेन में चढ़ने भी नहीं दिया गया. वे काठियावाड़ी वेश में थे, लेकिन भाजपा के गांधी धोती में गांधी के प्रचलित वेश में ट्रेन से मोतिहारी पहुंचे. इतना ही नहीं, मुजफ्फरपुर स्टेशन पर जदयू के गांधी के साथ दुर्व्यवहार भी किया गया और उन्हें अपनी पगड़ी उतार कर खुद को छुपाने की कोशिश करनी पड़ी.

चम्पारण सत्याग्रह शताब्दी वर्ष स्मृति समारोह को लेकर निश्चय ही चम्पारण के लोगों में काफी उत्साह था, लेकिन राज्य और केंद्र के नेताओं के आपसी वैमनस्य को देख कर बुद्धिजीवियों को निराशा ही हाथ लगी. केन्द्र प्रायोजित कार्यक्रमों में महागठबंधन का कोई भी नेता नजर नहीं आया, वहीं राज्य सरकार के समारोह से भाजपाइयों ने किनारा कर लिया. आपसी प्रतिद्वंद्विता ऐसी दिखी, जैसे चुनावों में होता है. केन्द्र के समारोह में भीड़ जुटाने का जिम्मा भाजपा नेताओं और कार्यकर्ताओं का था, तो राज्य सरकार की ओर से भीड़ जुटाने में प्रशासन के पसीने छूट रहे थे. बहरहाल यह समारोह पूरी तरह अपने उद्देश्यों से भटकता नजर आया. नेताओं ने अपनी-अपनी ब्रांडिंग करने की होड़ में केवल गांधी जी की मार्केटिंग की और यह सिलसिला पूरे वर्ष चलेगा और गांधी जी की आत्मा किसानों और मजदूरों की दुर्दशा देखकर कराहती रहेगी. तब लोगों की निर्धनता देखकर गांधी जी ने पारंपरिक वेश-भूषा का त्याग कर दो कपड़ों में जीवन निर्वाह करने की भीष्म प्रतिज्ञा ली थी और किसानों के हक के लिए सत्याग्रह किया था. लेकिन आज शराब, सौन्दर्य प्रसाधन, जहरीले कोल्ड ड्रिंक्स, विलासिता की वस्तु बनाने वाले, कॉरपोरेट घराने, देह प्रदर्शन का व्यापार करने वाले फिल्मकार, संवेदनहीन नेता, बेशर्म सियासी दलाल, रिश्वतखोर अफसर, सटोरिए अरबों-खरबों में खेलते हैं और अभाव और कर्ज में डूबा देश का अन्नदाता आत्महत्या करता है. यह मंजर देखकर भी मंदिर-मस्जिद, साधुओं-मुल्लाओं के बयान, लड़कियों के पहनावे और तीन तलाक जैसे मुद्दों पर गला फाड़कर चिल्लाने वाले तथाकथित नेता और बुद्धिजीवी कुछ भी बोलना मुनासिब नहीं समझते. ऐसे में देश को फिर किसी गांधी के आने का इंतजार है.■

feedback@chauthiduniya.com

आत्म कल्याण केन्द्र
Email:aatmakalyankendra@gmail.com
www.acharyasudarshanjimaharaj.org
आचार्य सुदर्शन जी महाराज के संदेश

संसार के समस्त जीवों के ऊपर अंतरिक्ष से प्राण ऊर्जा की वर्षा होती रहती है जो भाग्शाली,विवेकशील व्यक्ति होता है, वे अपने मुख को ऊपर करके इस प्राण ऊर्जा को पीते रहते हैं। और अपने जीवन को सबल बनाते हैं। हमारे जीवन के चारों और प्रकृति फैली हुई है। हरे भरे पेड़ नदी झरना, पहाड़, बहती हुई हवाएं हरे-हरे घास एवं छोटे छोटे पौधे इन सबसे हमें प्राण ऊंजा मिलती रहती है। वृक्षों और पहाड़ियों के मध्य भ्रमण करना चांदनी रात में खुले बदन बैठना, लाल सूर्य के दर्शन करना, हरी घास पर पैदल चलना, नदी झरनों में स्नान करना आदि ऐसे कई उपाय हैं, जिनसे जीवनशक्ति बढ़ायी जा सकती है। मनुष्य जितना अधिक प्रकृति की गोद में खेलता है, वह उतना ही अधिक स्वस्थ्य रह पाता है। ध्यान रहे कि जीवन-ऊर्जा बढ़ाने के लिए हमें वृक्षों के नीचे बैठना चाहिए। विशेषकर गायों के बीच मे रहें और गोपाल कृष्णा की तरह पशु उर्जा से लाभ उठाएँ। इतना ही नहीं, संतों के सम्पर्क में रहने से भी ऊर्जा मिलती है, उसे सात्विक ऊर्जा कहते हैं। इस ऊर्जा से जीवन में सात्विक वृत जन्म लेती है। आज का मनुष्य अशांति, भय और तनाव में जी रहा है। इस कारण उसका सारा जीवन नर्क बनता जा रहा है। जीवन हँसने और मुस्कराने के लिए है, उसको तनाव और चिंता में नष्ट करना समुचित नहीं है। इस संदर्भ में यह भी ध्यान रहे कि तनाव और चिंता मनुष्य स्वयं अर्जित करता है और उसके विषदंत से घायल होकर कराहने लगता है। यही कारण है कि जो जितना बड़ा आदमी है, वह उतना ही अधिक चिंतित दिखता है।■

CRM
TMT BAR
ISO 9001-2000 Certified Co.
IS:1786:2008
CM/L-5746178
भूकम्प रोधी
जंग रोधी
Fe-500
मुख्य खूबियाँ
• बचत
• मजबूती
• शानदार फिनीश
Mfg.: CITY ROLLING MILLS PVT. LTD., PATNA
HELPLINE : 0612-2216770

स्वतंत्रता सेनानी सम्मान समारोह

भाजपा की दूरी से चढ़ा लालू का पारा

चौथी दुनिया ब्यूरो

अखिल भारतीय स्वतंत्रता सेनानी सम्मान समारोह के दौरान गृह मंत्री राजनाथ सिंह के नहीं आने को लेकर जमकर सियासत हुई. सीएम नीतीश कुमार ने बिना कोई आरोप-प्रत्यारोप के सधी भाषा में अपनी बात रखी. वहीं, राजद प्रमुख लालू प्रसाद ने अपने खास अंदाज में उन पर जमकर हमला बोला. भाजपा को कोसने और उसे भला-बुरा कहने का कोई मौका लालू प्रसाद शायद ही छोड़ते हैं. यूपी चुनाव में करारी शिकस्त खाने के बाद से ही लालू प्रसाद किसी मौके की तलाश में थे. स्वतंत्रता सेनानी सम्मान समारोह में उन्हें यह सुनहरा मौका मिल भी गया. जैसे ही लालू प्रसाद को पता चला कि राजनाथ सिंह इस समारोह में आने की सहमति देने के बावजूद नहीं आ रहे हैं, तो उन्होंने कहना शुरू कर दिया कि वे स्वतंत्रता सेनानियों का भी अपमान कर रहे हैं. लालू जब समारोह में पहुंचे तब पूरे रौ में थे. राजद प्रमुख लालू प्रसाद ने मजाकिया लहजे में बोलना शुरू किया कि माननीय नीतीश कुमार सीएम हैं, इसलिए वे बोलने में परहेज करते हैं, लेकिन हमें इससे कोई परहेज नहीं है. जो सही है, वह खुलेआम बोलेंगे. गृह मंत्री राजनाथ सिंह के साथ-साथ भाजपा के खिलाफ मोर्चा खोलते हुए वे अपने अंदाज में जमकर बरसे. उन्होंने कहा कि जब नहीं आना था, तब काहे कंसेंट दे दिया. कुर्सी लगवाकर हटानी पड़ी, नाम का प्लेट ऐन मौके पर हटाना पड़ा. नहीं आना है, तो मत आओ. यह नीतीश और लालू का कार्यक्रम थोड़े ही है. यह गांधी विचारधारा को प्रसारित करने और स्वतंत्रता सेनानियों को सम्मान देने का कार्यक्रम है. जिनके लोग कभी स्वतंत्रता संग्राम में शामिल नहीं हुए, वही आज इसकी दुहाई दे रहे हैं. ऐसे लोगों को किसी तरह का ज्ञान देने का कोई हक नहीं है. इस तरह लालू प्रसाद ने अपने भाषण के अंत तक भाजपा के खिलाफ हमला जारी रखा. हालांकि सीएम नीतीश कुमार ने इशारों-इशारों में राजनाथ सिंह के नहीं आने पर नाराजगी जताई. उन्होंने कहा कि कार्यक्रम का आमंत्रण सभी पार्टी को दिया गया था. जो आए उनका बहुत अभिनंदन, लेकिन जो नहीं आए, उनसे भी किसी तरह की शिकायत नहीं है. गांधी के विचार से सहमत हैं, तो बहुत अच्छा. अगर इनके विचारों से सहमत नहीं हैं, तो उनसे किसी तरह की घृणा नहीं है. जदयू के प्रदेश प्रवक्ता नवल शर्मा ने कहा कि समारोह से भाजपा का अपने को समारोह सवे दूर रखना बेहद अफसोसजनक है. एक ऐसा कार्यक्रम जो किसी दल विशेष का नहीं, बल्कि राज्य सरकार द्वारा आयोजित था. इसका मकसद आजादी की लड़ाई में भाग लेनेवाले वीर सपूतों को सम्मानित करना था और जिसमें देश के राष्ट्रपति भी मौजूद थे, उससे दूरी बनाकर भाजपा ने अपनी संकीर्ण सोच का परिचय दिया है. जदयू के एक और प्रवक्ता राजीव रंजन प्रसाद ने कहा है कि समारोह के तहत आयोजित देश भर के स्वतंत्रता सेनानियों के सम्मान समारोह का बहिष्कार एनडीए की दुर्भाग्यपूर्ण हरकत है. ऐसा कर भाजपा और उसके सहयोगी दलों के नेताओं ने महात्मा गांधी की यादों, स्वतंत्रता सेनानियों और उन्हें सम्मानित करने आए राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी का अपमान किया है. इस रवैये से फिर सिद्ध हुआ है कि स्वतंत्रता आंदोलन से इन्हें न तो उस दौरान कोई मतलब था और न ही आज कोई मतलब है. राष्ट्रीय सम्मान और ऐसे कार्यक्रम का बहिष्कार कर भाजपा व एनडीए नेताओं ने यह साबित कर दिया कि आजादी की लड़ाई और उसके सेनानियों की उनकी नजर में कोई कीमत नहीं है. गांधी को महात्मा बनाने वाले चंपारण सत्याग्रह का भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में विशिष्ट स्थान है. कांग्रेस विधानमंडल दल के नेता सदानंद सिंह ने कहा कि समारोह में स्वतंत्रता सेनानियों को सम्मानित करने के कार्यक्रम में गृहमंत्री राजनाथ सिंह का नहीं आना उनके विचारों की संकीर्णता का परिचायक है. उन्होंने कहा कि जब राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी स्वतंत्रता सेनानियों को सम्मानित करना गर्व की बात मानते हैं, तो फिर भाजपा का लालू प्रसाद व राहुल गांधी के इस कार्यक्रम में मौजूदगी पर सवाल उठाना बेमानी है. गृहमंत्री द्वारा आने की सहमति देकर अंतिम क्षणों में इसमें भाग नहीं लेना स्वतंत्रता सेनानियों के लिए आयोजित सम्मान समारोह का अपमान है. उन्होंने कहा कि भाजपा के ऐसे एजेंडे से देश में असहिष्णुता को बढ़ावा मिलेगा. कांग्रेस उपाध्यक्ष राहुल गांधी जी ने सही कहा कि सत्ता में बैठे लोग डराने की कोशिश करेंगे, तो देश की जनता इसे कतई स्वीकार नहीं करेगी.

दूसरी तरफ राजनाथ सिंह सहित पूरे एनडीए के इस समारोह में न जाने को लेकर अपने तर्क हैं. भाजपा के पूर्व प्रदेश अध्यक्ष मंगल पांडेय ने कहा कि चंपारण सत्याग्रह शताब्दी समारोह जैसे गरिमामय कार्यक्रम का नीतीश कुमार ने राजनीतिकरण कर दिया और अपनी राजनीतिक लिप्सा के लिए चापलूसी की भी हद कर दी. मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने एक सुनियोजित षड्यंत्र के तहत यह सब किया और महामहिम राष्ट्रपति के पद की गरिमा को ठेस पहुंचाई.

पांडेय ने कहा कि लालू प्रसाद और कांग्रेस के युवराज राहुल गांधी को मंच पर लाकर नीतीश कुमार ने स्पष्ट कर दिया कि सत्ता बनाए रखना उनकी प्राथमिकता है, स्वतंत्रता सेनानियों का सम्मान नहीं. महात्मा गांधी समेत देश के स्वतंत्रता सेनानियों ने स्वाधीनता संग्राम इसलिए नहीं लड़ा था कि आजादी मिलने के बाद किसी कार्यक्रम में लालू प्रसाद जैसे भ्रष्टाचारी और सजायाफ्ता लोग उन्हें सम्मानित करेंगे. अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए नीतीश कुमार ने राष्ट्रपति को भी सजायाफ्ता व्यक्ति के साथ एक मंच पर बिठा दिया. मंगल पांडेय ने कहा कि स्वतंत्रता सेनानियों ने आजादी की लड़ाई देश के सम्मान के लिए लड़ी थी, लेकिन नीतीश कुमार ने आज सजायाफ्ता लालू प्रसाद को स्वतंत्रता सेनानियों के मंच पर बुलाकर उनका सम्मान नहीं, बल्कि अपमान किया है. इस कार्यक्रम को देखकर महात्मा गांधी की आत्मा भी कराहती होगी कि उनके नाम पर कार्यक्रम आयोजित कर नीतीश कुमार राजनीति कर रहे हैं.

इधर भाजपा के प्रदेश प्रवक्ता संजय टाइगर ने कहा कि लालू प्रसाद जैसे सजायाफ्ता व्यक्ति के साथ देश के गृह मंत्री को बैठना शोभा नहीं देता है. कार्यक्रम का राजनीतिकरण नहीं होना चाहिए. यह सब लालू प्रसाद को खुश करने के लिए किया गया. यह सही है कि राजनाथ सिंह ने इस समारोह में आने की सहमति दी थी, लेकिन जानकार बताते हैं कि जब यह जानकारी मिली कि भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष होने के नाते अमित शाह को न्योता नहीं दिया गया तो गाड़ी पटरी से उतर गई. प्रदेश भाजपा कोर ग्रुप ने स्थिति की समीक्षा की और अपनी भावनाओं से आलाकमान को भी अवगत करा दिया. राजनाथ सिंह को यह बात सही नहीं लगी कि अमित शाह जी को आखिर न्योता क्यों नहीं दिया गया? खैर कहते हैं कि राजनीति करने वालों को तो बस राजनीति करने के लिए बहाना चाहिए. सम्मान आजादी के सेनानियों का होना था इसमें पार्टी और उसके अध्यक्ष की बात कहां से आ गई. बात जब सेनानियों के सम्मान की थी, तो इसमें न्योता मिलने या नहीं मिलने का उतना महत्व कैसे हो गया? बिना न्योता के यहां आते तो उनका ही सम्मान बढ़ता. जो नहीं आए उन्हें खरी खोटी सुनाने से बेहतर होता कि वीर सेनानियों के सम्मान में दो-चार शब्द ज्यादा बोल दिया जाता.■

feedback@chauthiduniya.com

मुख्यमंत्री हर घर बिजली योजना

मगध के लाखों परिवार बिजली से आज भी वंचित

सुनील सौरभ

बिहार ही नहीं, पूरे देश में बिजली आम लोगों के लिए सबसे बड़ी समस्या बनी है. पंचायत से लेकर लोकसभा चुनाव तक में बिजली का मुद्दा अक्सर उछलता रहा है. हरेक दल अपने चुनावी वादों में बिजली की चर्चा जरूर करता है, चाहे बिजली आपूर्ति का मामला हो या फिर नि:शुल्क बिजली देने या फिर बिजली विहीन क्षेत्रों में बिजली पहुंचाने का.

इसी चुनावी वादे को पूरा करने के लिए बिहार में 'मुख्यमंत्री हर घर बिजली' योजना की शुरुआत हुई. पिछले विधानसभा चुनाव में महागठबंधन के घोषित मुख्यमंत्री पद के उम्मीदवार नीतीश कुमार ने बिहार की जनता से वादा किया था कि अगर महागठबंधन की जीत होती है, तब वे बिजली विहीन घरों में जल्द से जल्द बिजली पहुंचाने का कार्य करेंगे. सरकार बनने पर नीतीश कुमार ने मुख्यमंत्री हर घर बिजली योजना की शुरुआत की, लेकिन इस योजना की मगध प्रमंडल में बहुत अच्छी स्थिति नहीं है. प्रमंडल के पांचों जिलों में से सबसे छोटे जिले अरवल में इस योजना के तहत करीब 65 फीसदी लक्ष्य प्राप्त कर अव्वल रहा है, तो जहानाबाद सबसे पीछे. जबकि प्रमंडलीय मुख्यालय गया इस योजना के तहत मात्र 35 फीसदी लक्ष्य हासिल कर चौथे स्थान पर है. मगध प्रमंडल के लोगों को बिजली से रौशन करने की योजना की जब खुद मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने समीक्षा की तब इस योजना की सही स्थिति का पता चल सका. इसके बाद मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने सभी संबंधित पदाधिकारियों को फटकार लगाई थी. लेकिन आज भी मगध प्रमंडल के गया, जहानाबाद, नवादा, औरंगाबाद जिले के हजारों गांवों के लाखों परिवार आज भी बिजली सुविधा से वंचित हैं. सबसे अधिक प्रभावित नक्सल क्षेत्र के ग्रामीण हैं.

- अरवल हुआ सबसे ज्यादा रौशन
- जहानाबाद सबसे पीछे
- गया में महज 33 फीसदी हुआ काम

इस योजना के तहत गया जिले में वर्ष 2016-17 में 1,34,535 घरों में बिजली कनेक्शन देने का लक्ष्य रखा गया था, लेकिन जनवरी 2017 तक मात्र 44,492 घरों में ही बिजली कनेक्शन दिया जा सका. सरकारी आंकड़ों के अनुसार गया जिले में कुल परिवारों की संख्या 4,37,294 है.

ऊर्जा विभाग और उससे जुड़ी कंपनियों के अनुसार अभी 1,51,683 परिवारों को बिजली मिल रही है. औरंगाबाद जिले में कुछ बेहतर स्थिति है. मुख्यमंत्री हर घर बिजली योजना के तहत जो लक्ष्य था, वह तो पूरा नहीं हुआ, लेकिन बेहतर काम हुआ. इस जिले में इस योजना के तहत 2016-17 में करीब 65 फीसदी कार्य हुआ. इस जिले में कुल परिवारों की संख्या 4,10,601 है, जिसमें 1,46,900 परिवारों को बिजली मिल रही है. 1,66,636 परिवार आज भी बिजली कनेक्शन से वंचित हैं. नवादा जिले में 2016-17 में शत-प्रतिशत परिवारों को बिजली कनेक्शन देने का लक्ष्य रखा गया था. जनवरी 2017 तक मात्र 59,925 परिवारों को ही बिजली कनेक्शन का लाभ मिल सका है. आज भी इस जिले के 1,49,465 परिवार बिजली की सुविधा से वंचित हैं. जहानाबाद जिले में इस योजना की स्थिति सबसे खराब है. 2016-17 में टारगेट का मात्र 10 फीसदी काम ही जनवरी 2017 तक हो सका था. इस जिले में 34,511 घरों को बिजली कनेक्शन देने का टारगेट था, लेकिन महज 3614 घरों को ही बिजली मिल सकी. मुख्यमंत्री हर घर बिजली योजना में मगध का सबसे छोटा जिला अरवल सबसे अव्वल रहा है. इस जिले में 11,400 घरों को बिजली कनेक्शन देने का टारगेट था, जिसमें 8000 से अधिक घरों को बिजली कनेक्शन दिया जा चुका है. इस जिले में कुल परिवारों की संख्या 79,669 है, जिसमें करीब 40,000 परिवारों को बिजली मिल रही है. लेकिन ये सभी सरकारी आंकड़े हैं. हो सकता है कि उपर्युक्त परिवारों-घरों को बिजली का कनेक्शन दे दिया गया हो, लेकिन इन घरों को बिजली कितने घंटे मिल रही है, सवाल इसका है. हालांकि 29 जनवरी 2017 को मुख्यमंत्री नीतीश कुमार जब गया में सरकारी योजनाओं की समीक्षा कर रहे थे, तब ये आंकड़े ऊर्जा विभाग के अधिकारियों द्वारा पेश किए गए थे. इसमें कितनी सच्चाई है, इसका पता भौतिक सत्यापन के बाद ही चल सकता है. नक्सल प्रभावित मगध के पांच जिलों में ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी बिजली की स्थिति बेहतर नहीं है. ऐसे में अधिकारी जो भी दावे कर लें, लेकिन जमीनी हकीकत यह बयां करती है कि मगध के अधिकतर ग्रामीण क्षेत्र आज भी बिजली सुविधा से वंचित हैं. ग्रामीण क्षेत्रों को तो जाने दें, अंतरराष्ट्रीय पर्यटन स्थल बोधगया में भी बिजली आपूर्ति की स्थिति अच्छी नहीं है.■

feedback@chauthiduniya.com

नियमित व्ययाम से जिन्दगी आसान
तेज चाल 3 कि.मी. प्रतिदिन जरूरी

ariskon Pharma Pvt.Ltd.

डॉ. फरासत हुसैन
डी ऑर्थो

लाईफ लाईन मल्टी स्पेशिलीटि हॉस्पीटल व्हाईट हाउस कम्पाउन्ड, गया

गया के व्हाईट हाउस कम्पाउन्ड के पास लाईफ लाईन मल्टी स्पेशिलीटी हॉस्पीटल से डॉ. फरासत हुसैन ने वर्तमान समय में युवा और 30-35 से अधिक के लोगों की कार्यशैली पर चिंता जाहिर की और बताया कि कम्प्यूटर, ऑफिस और मोबाईल की व्यस्त जिन्दगी से हड्डी के कई रोग हो जाते हैं। ऐसे में उन्हें कम से प्रतिदिन 3 से ५ कि.मी. पैदल चलना अनिवार्य है। डॉ फरासत जो कि पूर्व में इण्डियन नेशनल स्पोर्ट्स के राष्ट्रीय अध्यक्ष रह चुके हैं ने बताया कि जॉब करने वाले लोगों को पीठ दर्द, गर्दन दर्द, व हेयर फ्रेक्चर ज्यादा हो रहा है। बढ़ती उम्र के साथ और बैठने वाले जॉब में आस्टोपोरिसिस हो जाने से उनकी हड्डियां घुन लगे लकड़ी की तरह हो जाती है। इसलिए आज के युग में हड्डियों को मजबूती देना अनिवार्य है। इसके लिए सुबह व्यायाम यानि एक्सरसाईज जरूर करें साथ ही प्रतिदिन तेज पैदल चाल कम से कम 5 कि.मी. तक चलें। सुबह का वक्त न मिले तक दिन में जब वक्त मिले तब। सबसे महत्वपूर्ण बात कि जिक्र करते हुए डॉ. फरासत हुसैन ने बताया कि अपने वजन को बढ़ने से रोकें। कैल्शियम युक्त भोजन तो अवश्य लें जैसे-शाकाहरी व्यक्तियों के लिए-दुध, सोयाबिन, पनीर, दूध वाले प्रोडक्ट्स हरी शब्जीयां व मांसाहारी के लिए मछली मीट आदि। ■ भारती

ACOBA CAP/SYP/INJ
Methylcobalmin, Lycopene, Multivitamin Multimineral, Ginseng & Antioxident

Carbo - XT
Ferrous Ascorbate with Folic Acid Tab.

AREX
Dextromethorphan, Guaiphenesine Ammonium chloride Cough Syp.

ASRFEN-P
Acedofenac+Paracetamol Serratiopeplidase Tab.

ECTALOPAM
Escilalopram oxalate & Clonazepam Tablets

SILIPLEX
Silymarin, Vitamin B-Complex & Lactic acid, Calcium, Bacillus Cap/Syp

NOKSIRA Pharma Pvt.Ltd.
A Division of AriskonPharma

राज्यपाल राम नाईक की किताब 'चरैवेती-चरैवेती' के उर्दू अनुवाद की हो रही है मज़म्मत

राज्यपाल के साथ मज़ाक़

सूफ़ी यायावर

राज्यपाल रामनाईक की किताब 'चरैवेती-चरैवेती' के उर्दू अनुवाद की अशुद्धियों को लेकर उर्दू अकादमिक जगत में काफी चर्चा है. उर्दू साहित्य की जानकार हस्तियां राज्यपाल राम नाईक की किताब 'चरैवेती-चरैवेती' के अनुवादक डॉ. अब्बास रज़ा नैयर जलालपुरी की योग्यता पर सवाल उठा रही हैं और राज्यपाल से अपनी पुस्तक का दोबारा अनुवाद कराने का उम्मीद कर रही हैं. उर्दू साहित्य के आलोचक एवं लेखक अल्लामा जमीर नकवी तो यहां तक कहते हैं कि राज्यपाल से खुद को जोड़ कर कुछ लोग उस नाम पर अपना उल्लू साध रहे हैं.

उत्तर प्रदेश के राज्यपाल राम नाईक की पुस्तक 'चरैवेती-चरैवेती' उनकी सामाजिक-राजनीतिक यात्रा और योगदानों पर आधारित उनकी आत्मकथा है. सियासी यात्रा में असफलताओं के बावजूद वे कभी निराश नहीं हुए, यहां तक कि कैंसर जैसे रोग से ग्रसित होने के बाद भी उनकी संघर्ष यात्रा जारी रही. राम नाईक कहीं हताश नहीं हुए, कहीं थके नहीं, कहीं रुके नहीं, सदैव चलते ही रहे,'चरैवेती-चरैवेती'. गतिशीलता उनके जीवन में रची-बसी रही. उन्होंने न केवल कैंसर जैसी गम्भीर बीमारी को परास्त किया, बल्कि अपने संघर्षों के बूते कई सामाजिक व्याधियों को भी परास्त किया. राम नाईक ने कुष्ठ रोगियों के लिए भी काम किया. मूलरूप से मराठी भाषा में लिखी गई किताब का अनुवाद हिंदी समेत कई भाषाओं में हुआ. उर्दू में इसका अनुवाद लखनऊ विश्वविद्यालय के उर्दू विभाग के अध्यक्ष डॉ. अब्बास रज़ा नैय्यर जलालपुरी ने किया है. राज्यपाल की इस पुस्तक का विमोचन लखनऊ विश्वविद्यालय में हुआ था, जिसमें राज्यपाल राम नाईक के साथ डॉ. अम्मार रिज़वी, लखनऊ विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. एसपी सिंह, प्रो. आसिफा जमानी, प्रो. असमत मलिहाबादी, प्रो. साबरा हबीब, लेखक अनवर जलालपुरी, डॉ. फ़ज़ल इमाम, डॉ. शारिब रुदौलवी जैसे कई लोग शरीक हुए थे.

अल्लामा जमीर नकवी राज्यपाल की पुस्तक के उर्दू अनुवाद की भीषण अशुद्धियों का ज़िक्र करते हुए कहते हैं कि राज्यपाल ने ऐसे अयोग्य व्यक्ति को यश भारती सम्मान देने के लिए समाजवादी सरकार से अनुशंसा की, जो इस लायक भी नहीं था कि राज्यपाल की किताब का सही-सही उर्दू अनुवाद भी कर सके! नक़वी कहते हैं कि किताब में अनुवाद की गंभीर गलतियां अनुवादक की योग्यता पर गहरे सवाल खड़े करती हैं. पुस्तक पढ़ते समय ऐसा ही लगता है कि अनुवादक को न हिंदी का समुचित ज्ञान है और न उर्दू का. नकवी कहते हैं कि सरसरी नज़र से भी किताब देखने वालों को बहुत सी ग़लतियां मिल जाएंगी. वे सवाल उठाते हैं कि उर्दू साहित्य के डॉ. अज़ीज़उद्दीन, डॉ. इशक़ रज़ा, डॉ. हसन अब्बास, डॉ. सिराज अजमली, डॉ. तक़ी अली आब्दी, प्रोफेसर चन्द्रशेखर, डॉ. ऐनुल हसन जैसे अनेकानेक विद्वानों के होते हुए ऐसे अयोग्य अनुवादक को चुनना वाकई आश्चर्यजनक है. उर्दू जगत में ऐसी त्रुटिपूर्ण किताब के कारण राम नाईक की सार्थकता और सकारात्मकता पर सवाल उठ रहे हैं.

> **किताब में अनुवाद की गंभीर ग़लतियां अनुवादक की योग्यता पर गहरे सवाल खड़े करती हैं. पुस्तक पढ़ते समय ऐसा ही लगता है कि अनुवादक को न हिंदी का समुचित ज्ञान है और न उर्दू का. सरसरी नज़र से भी किताब देखने वालों को बहुत सी ग़लतियां मिल जाएंगी.**
>
> *-अल्लामा ज़मीर नक़वी, उर्दू साहित्य के आलोचक एवं लेखक*

राज्यपाल की किताब 'चरैवेती-चरैवेती' के उर्दू अनुवाद की अशुद्धियों का ज़िक्र करते हुए अल्लामा जमीर नकवी कहते हैं कि उर्दू के विद्वान अनुवादक द्वारा 'काम में सर गड़ाए रखने वाला' लिखना दुखद है. उर्दू अनुवादक को काम में 'मुनहमिक रहने वाला' लिखा जाना समझ में नहीं आया. इसी तरह पृष्ठ संख्या 188 की दूसरी और चौथी पंक्ति में 'मच्छी मार समाज' लिखा है. विद्वान अनुवादक को सामाजिक संवेदनशीलता समझ में नहीं आई कि किसी समुदाय को 'मच्छी मार' लिखना मर्यादा के दायरे में नहीं आता. इसके स्थान पर वे 'माही गीर समाज' लिख सकते थे. 'मच्छी मार' शब्द से लोगों की भावनाओं को ठेस पहुंच सकती है और यह राजनीतिक दृष्टिकोण से भी सही नहीं है. इसी तरह पृष्ठ संख्या 203 की चौथी पंक्ति में 'कैंसर की चपेट' में लिखा गया, जबकि उर्दू में 'चपेट' नहीं लिखा जाता. 'चपेट' का सटीक मुतबादिल शब्द 'ज़द' है. पृष्ठ संख्या 206 की चौथी पंक्ति में 'इज़ाफी कमिश्नर राम मूर्ती' लिखा गया है. इज़ाफी कमिश्नर एडिशनल कमिश्नर के लिए लिखा गया है. उर्दू भाषा में भी एडिशनल कमिश्नर ही लिखा जाता है. उर्दू में 'इज़ाफी' का मतलब फालतू या आवश्यकता से अधिक होता है. पृष्ठ संख्या 205 पर जो तस्वीर लगी है इसके कैप्शन में 'सहाफी कपिल पाटिल महाराष्ट्र असेम्बली काउंसिल में उस्ताद एमएलए' लिखा गया है. अनुवादक ने यह नहीं समझा कि असम्बेली अलग होती है और कौंसिल अलग. असेम्बली का सदस्य एमएलए होता है और कौंसिल का सदस्य एमएलसी. नकवी कहते हैं कि किताब के उर्दू अनुवाद में ऐसी गलतियां भरी-पड़ी हैं. अब देखिए किताब के पृष्ठ संख्या 215 की पहली पंक्ति में अनुवादक लिखते हैं कि 'रेल मुसाफिर की परेशानियों के लिए तहरीक शुरू की.' सवाल उठता है कि रेल यात्रियों की परेशानियों को दूर करने के लिए आन्दोलन शुरू किया या परेशानियां बढ़ाने के लिए? इसे कुछ यूं लिखा जाना चाहिए था, 'परेशानियां दूर करने के लिए तहरीक शुरू की.' पृष्ठ संख्या 215 के तीसरे पैराग्राफ की पहली पंक्ति में 'लोकसभा इन्तेखाबाती हलके' लिखा है, जबकि इसे 'लोकसभा हलके इन्तेखाब' लिखना चाहिए था. पृष्ठ संख्या 216 की पांचवी पंक्ति में 'मांग की पुरज़ोर कोशिश भी की,' जबकि लिखना चाहिए था, 'मांग मनवाने के लिए पुरज़ोर कोशिश भी की.' इसी पृष्ठ संख्या की नौवीं पंक्ति में 'जोश के साथ पुरज़ोर इस्तेक़बाल किया,' लिखा है. जबकि समझदार उर्दू अनुवादक लिखेगा 'जोश ओ ख़रोश के साथ ज़बरदस्त इस्तेक़बाल किया.' पृष्ठ संख्या 218 की सातवीं पंक्ति में 'अंडग्राउंड या सत्याग्रही' लिखा है, जबकि इसे 'अंडरग्राउंड सत्याग्रही' लिखना चाहिए था. पृष्ठ संख्या 226 की सातवीं पंक्ति में लिखा है, 'हम में एक नागुफ़ता मोआहेदा हो गया था.' उर्दू के जानकार भी यह नहीं समझ पा रहे हैं कि 'नागुफ़ता मुआहेदा' क्या होता है? पृष्ठ संख्या 234 के दूसरे पैराग्राफ़ का उन्वान (शीर्षक) शोबा पेट्रोलियम रखा गया है, जबकि इसे पेट्रोलियम महकमा लिखना चाहिए था. पृष्ठ संख्या 235 की तीसरी पंक्ति में 'जनसंघ का तन्ज़ीमकार वज़ीर था' लिखा गया है. यह तन्ज़ीमकार वज़ीर क्या होता है? अनुवादक को जनसंघ के संगठन मंत्री का उर्दू मतलब नहीं समझ आया, उसे आर्गनाइज़िंग सेक्रेटरी या तन्ज़ीमी सेक्रेटरी लिखा जा सकता था. पृष्ठ संख्या 278 की तीसरी पंक्ति में इन्तेख़ाबी हलक़ों की तामीरे नौ लिखा गया है. विद्वान अनुवादक यह नहीं जानते कि इन्तेख़ाबी हलक़ों की हदबन्दी होती है, तामीरे नौ नहीं. इसे इन्तेख़ाबी हल्कों की नई हदबन्दी लिखना चाहिए था. पृष्ठ संख्या 279 की बारहवीं पंक्ति में 'मोहब्बत का चोगा' लिखा गया है. यह चोगा क्या होता है? यहां 'चोंगा' लिखना चाहिए था.

नक़वी कहते हैं कि ऐसी अनगिनत अशुद्धियों से भरी-पड़ी किताब से राज्यपाल की गरिमा को ठेस पहुंचती है. इसे दोबारा अनुदित करने के बारे में राज्यपाल को सोचना चाहिए. ऐसे अनुवादों से अनुवादक की लाइल्मी (अज्ञानता) सार्वजनिक हो जाती है. राज्यपाल की पुस्तक का अनुवाद कराने के लिए राजभवन सचिवालय को बाकायदा जांच-पड़ताल करानी चाहिए थी और उर्दू के जानकार को यह काम सौंपा जाना चाहिए था, लेकिन राजभवन सचिवालय ने यह जिम्मेदारी नहीं निभाई और राज्यपाल को अंधेरे में रखा. राज्यपाल की किताब के उर्दू संस्करण में शिया पीजी कॉलेज के पूर्व प्राचार्य और कांग्रेस नेता डॉ. अम्मार रिज़वी ने पेश लफ़्ज़ (प्रस्तावना) लिखा है. प्रस्तावना में उन्होंने पुस्तक की प्रशंसा में काफी कुछ लिखा, लेकिन पुस्तक की अशुद्धियों पर उनका ध्यान क्यों नहीं गया? यह विचारणीय प्रश्न है. इसी तरह राज्यपाल राम नाईक को राजभवन सचिवालय ने उर्दू संस्करण के प्रकाशक के बारे में भी पूरी तरह अंधेरे में रखा. राम नाईक की किताब के उर्दू संस्करण के प्रकाशक सैयद एजाज़ हैदर हुसैनी (मैनेजिंग डायरेक्टर, गोइन बर्ग, इंडिया) और उनके भाईयों पर लखनऊ के चौक कोतवाली में चार एफआईआर दर्ज हैं. इन मुकदमों से बचने के लिए भी राजभवन के नाम का इस्तेमाल हो रहा है. राज्यपाल को अंधेरे में रखने के लिए राजभवन सचिवालय के उर्दू अफ़सर और सूचना अधिकारी भी उतने ही जिम्मेदार हैं.■

feedback@chauthiduniya.com

शहादत के सत्रह साल बाद भी महोली में गुमनाम है शहीद मनोज यादव

नेताओं की बेशर्मी पर लानत

संजीव गुप्ता

शहीद मनोज यादव

शहीद मनोज यादव के फ़ौजी पिता सीताराम यादव और मां सत्यवती

शहीद मनोज यादव के सम्मान में सेना ने अपने एक्सचेंज का नाम मनोज एक्सचेंज रख दिया

जिनके नाम से रौशन था कोना-कोना, आज कोई नहीं जो उनकी कब्र पर रखे चिराग़,' ये पंक्तियां सीतापुर के महोली कस्बे के शहीद मनोज यादव की कुर्बानी के साथ सटीक उतरती हैं. महोली के इस सपूत की शहादत के 17 साल हो गए, लेकिन शासन-प्रशासन के किसी अलमबरदार या नुमाइंदे ने आजतक शहीद के बारे में जानने या उसके परिवार की सुध लेने की जरूरत नहीं समझी. सीतापुर के लोग आई-गई सरकारों की बेशर्मी पर खुली लानत भेजते हैं. लेकिन इससे शासन-प्रशासन के प्रतिनिधियों पर क्या फर्क पड़ता है. शहीद मनोज यादव की न तो आज तक लाश मिली और न शहीद के परिजनों को मिलने वाली सम्मान राशि मिली, न प्रदेश सरकार से ही कोई मुआवजा प्राप्त हुआ.

राष्ट्रीय राजमार्ग पर महोली कस्बे में स्थित पश्चिमी मास्टर कॉलोनी निवासी सीताराम यादव का फौजी बेटा मनोज यादव वर्ष 2001 में ही कश्मीर के बारामूला में शहीद हो गया था. मनोज के परिवार वालों को केवल इतना ही बताया गया कि बम धमाके में मनोज यादव शहीद हो गए. शहीद के परिवार को एक पत्र के सिवा कुछ नहीं मिला. न मनोज यादव का पार्थिव शरीर मिला और न शहीद का दर्जा प्राप्त सैनिक के परिवार को मिलने वाला आर्थिक और पदकीय सम्मान मिला. शहीद परिवार को नेताओं नौकरशाहों ने सामाजिक सम्मान से भी वंचित कर दिया. मनोज के पिता सीताराम यादव खुद भी थल सेना में सैनिक थे. सेना से रिटायर होने के बाद उनकी इच्छा पर मनोज यादव भी अपने पिता की राह पर चल पड़े. हालांकि मनोज की मां सत्यवती नहीं चाहती थीं कि उनका बेटा फौज में जाए, लेकिन मनोज का प्रण उसे फौज में ले गया. नौ जून 1997 को मनोज यादव भारतीय सेना के तोपखाना रेजीमेंट में गनर के लिए चुने गए. मनोज के पिता भी इससे काफी खुश थे. हालांकि कुछ दरम्यान बाद मनोज के पिता का निधन हो गया और मनोज ही अपने परिवार का सहारा हो गए. मां सत्यवती को हमेशा अपने बड़े बेटे मनोज की चिट्ठी का इंतजार रहता. अचानक एक दिन डाकिया एक पत्र लेकर आया और उसने मनोज के छोटे भाई अजय के कान में कुछ कहा. अजय पत्र पढ़ने की हिम्मत नहीं जुटा पा रहा था. मां ने अजय के हाथ से चिट्ठी छीन ली और पढ़ते ही अचेत होकर गिर पड़ीं. वह पत्र तोपखाना रेजीमेंट के कमांडिंग अफसर कर्नल केएल शर्मा का था, जो उन्होंने मनोज यादव की शहादत की सूचना देने के लिए लिखा था. 30 अप्रैल 2001 को लिखे उस पत्र में कमांडिंग अफसर ने गनर मनोज यादव (नंबर 14423400-एच) की शहादत की सूचना दी थी. इसके अलावा उस आधिकारिक पत्र में मनोज यादव की शहादत के बारे में कोई विस्तृत जानकारी नहीं दी गई थी और न आधिकारिक तौर पर शहादत की तारीख और उसका कारण ही बताया गया था. कमांडिंग अफसर की चिट्ठी के साथ एक मेडिकल रिपोर्ट जरूर संलग्न थी, जिससे मनोज के परिजनों को पता चला कि 25 अप्रैल 2001 को ड्यूटी के दौरान श्रीनगर के बारामूला इलाके में बने एक बंकर में विस्फोट के दौरान मनोज यादव मारे गए थे. तब से मां सत्यवती के परिवार पर पहाड़ गिर पड़ा है. 17 साल बीत गए, लेकिन शहीद के परिवार की फिक्र करने कोई नहीं आया. सीतापुर और महोली अपने शहीद के लिए चाहे जितना भी फक्र करता रहे.

शहीद के शव का इंतजार ही करते रह गए लोग

मातृभूमि की रक्षा करते हुए शहीद हुए मनोज यादव का शव भी मरणोपरांत उनके पैतृक आवास पर नहीं आ सका था. स्थानीय लोग और शहीद के परिजन अंतिम संस्कार से भी वंचित रह गए. बंकर में हुए भयावह विस्फोट में मनोज यादव का शरीर क्षत-विक्षत हो जाने के कारण सेना ने बारामूला में ही उनका अंतिम संस्कार कर दिया था. हालांकि शहीद के भाई को वहां बुला कर उनके हाथों शहीद का अंतिम संस्कार कराना चाहिए था. लेकिन सेना ने इस संस्कारिक-अनिवार्यता का कोई ध्यान नहीं रखा. इस 25 अप्रैल को मनोज की पुण्यतिथि थी. शहीद की मां सत्यवती को यह पीड़ा लगातार सालती है कि उनके बेटे को आखिरी बार वे देख भी नहीं पाईं. मां सत्यवती आज भी दरवाजे की ओर टकटकी लगाए देखती रहती हैं और कमांडिंग अफसर की चिट्ठी को बार-बार पढ़ती हैं.

कर्मभूमि पर सम्मान, जन्मभूमि पर अपमान

शहीद मनोज यादव को उनकी कर्मभूमि पर सेना ने तो सम्मान दिया, लेकिन उनकी जन्मभूमि पर जो सम्मान मिलना चाहिए था, वह नहीं मिला. जनपद सीतापुर के शासन व प्रशासन के लिए यह शर्म की बात है कि महोली नगर के जिस फौजी की शहादत को सेना ने अनुपम स्मृति के रूप में जीवित रखा, उसी शहीद को उसकी जन्मभूमि में ही गुमनामी के अंधेरे में धकेल दिया गया. इसके लिए शासन-प्रशासन के अधिकारियों के साथ क्षेत्र के सांसद और विधायक ज़िम्मेदार हैं, जिन्होंने जनप्रतिनिधि होने की लाज नहीं रखी.

मनोज यादव की शहादत के बाद तत्कालीन सेनाध्यक्ष के निर्देश पर सेना ने शहीद गनर मनोज यादव की स्मृति में उनके नाम पर बारामूला के ऑपरेशनल एरिया में 'सिग्नल पोस्ट' स्थापित किया, जिसका नाम 'मनोज एक्सचेंज' रखा गया है. लेकिन सीतापुर जिला प्रशासन या यहां के जन-प्रतिनिधियों ने शहीद की स्मृति में कुछ नहीं किया. तथाकथित जन-प्रतिनिधियों की बेशर्मी यह है कि उन्हें अपने नाते-रिश्तेदारों के नाम पर या अपने नाम पर सड़क का नामकरण तो याद रहता है, पर शहीद की कुर्बानी याद नहीं रहती. शहीद मनोज यादव का घर महोली विधानसभा क्षेत्र में आता है. वहां से समाजवादी पार्टी के अनूप गुप्ता पांच साल विधायक रहे. उन्होंने कई नेताओं के नाम पर अपनी विधायक-निधि से कई गांवों में स्वागत द्वार और निजी विद्यालयों में कमरे बनवाए. अपने पिता दिवंगत ओमप्रकाश गुप्ता के नाम के आगे युग पुरुष अंकित कराना उन्हें याद रहा, लेकिन सेना के सिपाही की शहादत उन्हें याद नहीं रही. महोली विधानसभा क्षेत्र धौरहरा संसदीय क्षेत्र में आता है, जहां से पूर्व केंद्रीय राज्यमंत्री जितिन प्रसाद सांसद रहे. जितिन के लिए मनोज की शहादत का कोई मायने नहीं रहा. भाजपा की रेखा वर्मा मौजूदा समय में यहां की सांसद हैं. रेखा वर्मा को महोली कस्बे के स्वजातीय भानू वर्मा के प्लॉट की कीमत बढ़ाने के लिए खेतों में सड़क बनवाना याद रहा, लेकिन उसी महोली में एक सैनिक शहीद हुआ था, उन्हें यह बात याद नहीं रही.

महोली के चेयरमैन दिनेश गुप्ता टीटू और अधिशाषी अधिकारी दयाशंकर वर्मा ने कस्बे के लिए अभूतपूर्व काम किया है. चेयरमैन ने महोली-गुजिया मार्ग का नाम अपने पिता श्री कृष्ण गुप्ता के नाम और राष्ट्रीय राजमार्ग से अवस्थी टोला मार्ग का नाम अपने रिश्तेदार रामलाल गुप्ता के नाम करने का अभूतपूर्व कार्य कर दिखाया. टीटू को शहीद के सम्मान में उनके मोहल्ले का नाम शहीद मनोज के नाम करने का नेक ख्याल नहीं आया. शहीद के नाम पर न कोई पार्क बना न कोई शहीद स्मारक.नेताओं और नौकरशाहों की इस घोर संवेदनहीनता से न सिर्फ शहीद के परिजन क्षुब्ध हैं, बल्कि पूरा क्षेत्र इससे आहत है.■

feedback@chauthiduniya.com

पूंजी निवेश के नाम पर जनता की आंख में धूल झोंकते रहे अखिलेश

निवेश आया नहीं, दावा किया कि आया

दीनबंधु कबीर

अब यह बात भी खुल रही है कि समाजवादी पार्टी की सरकार के मुख्यमंत्री अखिलेश यादव अपने पूरे कार्यकाल के दौरान प्रदेश में पूंजी निवेश के मसले पर भी लोगों के समक्ष झूठ ही परोसते रहे. प्रदेश में पूंजी निवेश को लेकर निवर्तमान मुख्यमंत्री कभी कुछ बोलते रहे, तो कभी कुछ. कभी यूपी में 54 हजार करोड़ का निवेश दिखाया गया, तो कभी आंकड़ों को और बढ़ा-चढ़ा कर पेश किया जाता रहा. जबकि हकीकत कुछ और ही है. आधिकारिक तथ्य यही है कि 'काम बोलता है' के नारे के वाहक अखिलेश यादव के कार्यकाल में मायावती के शासनकाल से कम पूंजी निवेश हुआ. अखिलेश के कार्यकाल में उत्तर प्रदेश में 27,374.50 करोड़ रुपए का ही पूंजी निवेश हो पाया, जबकि मायावती के कार्यकाल में उत्तर प्रदेश में 32,492.85 करोड़ रुपए का पूंजी निवेश हुआ था. अखिलेश सरकार ने प्रदेश में पूंजी निवेश के नाम पर अमेरिका, कनाडा, जर्मनी, नीदरलैंड समेत कई दूसरे देशों से लेकर कई भारतीय कंपनियों से करार का प्रचार किया था और निवेशकों को लुभाने के लिए मुम्बई, दिल्ली, आगरा में कॉन्क्लेव के आयोजन पर करोड़ों रुपए पानी की तरह बहा दिए थे. निवेशकों की मदद के लिए एकल खिड़की व्यवस्था लागू करने और विदेशी पूंजी निवेशकों के लिए एनआरआई विभाग का गठन करने तक का ऐलान हुआ था. लेकिन आज हकीकत की जमीन पर कुछ भी नहीं दिख रहा है.

आप याद करते चलें कि जून 2014 में अखिलेश सरकार ने करोड़ों रुपए खर्च कर दिल्ली के आलीशान ताज पैलेस होटल में उत्तर प्रदेश इन्वेस्टर्स कॉन्क्लेव का आयोजन किया था. उस कॉन्क्लेव में निवेशकों और राज्य सरकार के बीच 54,606 करोड़ रुपए के निवेश का बाकायदा एमओयू भी साइन हुआ. लेकिन इसमें सरकार के पास कितना पैसा आया, यह अखिलेश सरकार नहीं बता पाई, लेकिन आयोजन से लेकर इस तथाकथित निवेश के प्रचार-प्रसार में अखिलेश सरकार ने करोड़ों रुपए जरूर फूंक डाले थे. उसी निवेश कॉन्क्लेव में अखिलेश यादव ने राज्य की राजधानी लखनऊ को देश की राजधानी दिल्ली से जोड़ने के लिए छह लेन का आगरा-लखनऊ एक्सप्रेस-वे बनाने के फैसले का बखान किया था और कहा था कि इससे प्रदेश की अर्थव्यवस्था गति पकड़ लेगी. आप जानते ही हैं कि आगरा-लखनऊ एक्सप्रेस-वे घपलों और घोटालों की जमीन पर बना है और इसकी छानबीन हो रही है.

अखिलेश सरकार के उस इन्वेस्टर्स कॉन्क्लेव में 54,606 करोड़ रुपए के निवेश के एमओयू पर हस्ताक्षर करने वाले पूंजी घरानों में एस्सेल के नाम पर 20,000 करोड़, रिलायन्स जिओ 5,000 करोड़, आईटीसी 2,100 करोड़, एमिटी 2,000 करोड़, फोर्टिस 1,150 करोड़, रिवर इंजीनियरिंग प्राइवेट लिमिटेड 350 करोड़, सोनालिका 200 करोड़, यूफ्लेक्स 4,000 करोड़, जेवीएल एग्रो इंडस्ट्रीज़ 2,200 करोड़, श्रीसीमेन्ट 550 करोड़, अज़्यूर पावर 800 करोड़, कृभको 150 करोड़, अल्ट्रा फेयरवुड 220 करोड़, यूपी फुड एंड लॉजिस्टिक पार्क 626 करोड़, रीकृति फुड पार्क 200 करोड़, सम्प्रास फुड एंड ब्रिवरेजेज़ मार्केटिंग 60 करोड़, डंकन गोयनका ग्रुप 100 करोड़, यशोदा हॉस्पिटल 2,000 करोड़, पास्वारा 250 करोड़, मथुरा रिफायनरी 8,000 करोड़, हिन्दुस्तान पेपर मिल्स 4,000 करोड़, गेल 500 करोड़ और मॉडर्न ओवरसीज ने 150 करोड़ रुपए के निवेश पर औपचारिक सहमति दी थी. लेकिन इन घरानों में से कितनों ने कितने रुपए यूपी में इन्वेस्ट किए, इसका कोई आधिकारिक ब्यौरा अखिलेश सरकार नहीं दे पाई.

अखिलेश सरकार ने यह भी ऐलान किया कि कनाडा के रॉब सैम्पसन की कंपनी सेरेस बायोसिस्टम्स ने यूपी सरकार की निवेश नीति से प्रभावित होकर यहां जैविक खाद बनाने के लिए 300 करोड़ के निवेश का करार किया है. इससे यूपी के बेरोजगारों को काम भी मिलेगा. अखिलेश सरकार ने सितम्बर 2015 में मुंबई में आयोजित इन्वेस्टर्स कॉन्क्लेव में 51 हजार करोड़ रुपए के पूंजी निवेश पर करार होने की बात कही थी. जापान की तोशीबा पावर के भी यूपी में निवेश करने की बात कही गई थी. यह भी कहा गया था कि अमूल कंपनी लखनऊ, कानपुर, बनारस और सैफई में दूध उत्पादन के केंद्र खोलेगी. लेकिन यह सब हवा-हवाई ही साबित हुआ. दिलचस्प यह है कि 2015 के मुंबई इन्वेस्टर्स कॉनक्लेव में भी निवेश से संबंधित अधिकांश बातें वही कही गईं, जो 2014 के दिल्ली कॉन्क्लेव में कही गई थीं. यानि, साफ-साफ तौर पर उत्तर प्रदेश के लोगों को निवेश के नाम पर झांसा दिया जाता रहा और करोड़ों रुपए फूंक डाले गए. मुंबई कॉनक्लेव पूंजी निवेश का आयोजन कम फिल्मी कलाकारों का ग्रैंड-शो अधिक था.

बहरहाल, इसके बाद वर्ष 2016 में भी अखिलेश सरकार ने प्रदेश में 3,166 करोड़ रुपए के पूंजी निवेश की बात प्रचारित की और कहा कि यूपी में विभिन्न परियोजनाओं के जरिए 3,166 करोड़ रुपए का पूंजी निवेश होगा और इससे 11,645 रोजगार उपलब्ध होंगे. लेकिन न तो पूंजी निवेश हुआ और न ही बेरोजगारों को रोजगार मिला. इसी निवेश के बहाने एक प्रमुख अंग्रेजी अखबार को उपकृत करने के लिए विश्वविद्यालय बनाने के नाम पर ग्रेटर नोएडा की सैकड़ों एकड़ बेशकीमती जमीन धरमखाते में दे दी गई. निवर्तमान सरकार द्वारा प्रचारित किया गया कि प्रदेश में निवेश के लिए विभिन्न परियोजनाओं को मंजूरी दी गई है, लेकिन इन परियोजनाओं को मंजूरी देने के नाम पर करोड़ों रुपए नेताओं-नौकरशाहों की जेबों में चले गए, लेकिन सरकारी खजाने को उस अनुपात में कुछ नहीं मिला. बताया गया कि परियोजनाएं ग्रेटर नोएडा, कानपुर देहात, मथुरा, शाहजहांपुर, महोबा और ललितपुर जिले में स्थापित होंगी. यह भी पहले ही तय हो गया कि सरकार उन इकाइयों को सात से 10 वर्षों में करीब 3,184 करोड़ रुपए की सुविधा देगी. बताया गया था कि ग्रेटर नोएडा में एलजी इलेक्ट्रॉनिक्स 1,328 करोड़ रुपए का निवेश करेगी. इसी तरह स्पर्श इंडस्ट्रीज (कानपुर देहात) के 324 करोड़, अशर एग्रो (मथुरा) के 272.79 करोड़, सुखबीर एग्रो एनर्जी (शाहजहांपुर) के 278.46 करोड़, सुखबीर एग्रो एनर्जी (महोबा और ललितपुर) के 377.99 करोड़ और बेन्नैट इंस्टीट्यूट ऑफ हायर एजुकेशन (ग्रेटर नोएडा) के 585 करोड़ रुपए के निवेश की बात भी कही गई थी. अब इस बात की छानबीन हो रही है कि इनमें से कितने प्रतिष्ठानों ने कितना इन्वेस्ट किया और उस एवज में कितना फायदा उठाया.

सूचना के अधिकार के तहत संजय शर्मा की ओर से मांगी गई जानकारी में काफी हील-हुज्जत के बाद यूपी सरकार ने आधिकारिक तौर पर कबूल किया कि यूपी में पूंजी निवेश कराने के मामले में अखिलेश यादव पूर्ववर्ती मायावती सरकार से पिछड़ गए. उनका काम सिर्फ प्रचार ही साबित हुआ. मायावती ने मुख्यमंत्री बनने के बाद पहले चार वर्षों में यूपी में कुल 32,492.85 करोड़ का पूंजी निवेश कराया था. जबकि अखिलेश यादव मुख्यमंत्री बनने के बाद प्रथम चार वर्षों में केवल 27,374.50 करोड़ रुपए का ही पूंजी निवेश करा पाए. अखिलेश के कार्यकाल का पूंजी निवेश मायावती के कार्यकाल के मुकाबले 5,118.35 करोड़ रुपए कम यानि, लगभग 16 प्रतिशत कम रहा.

उक्त दोनों मुख्यमंत्रियों के कार्यकाल में हुए पूंजी निवेश का विस्तृत ब्यौरा यह है कि मायावती के शासनकाल में वित्तीय वर्ष 2007-08 में 4,918.26 करोड़ रुपए, 2008-09 में 5176.63 करोड़ रुपए, 2009-10 में 11,951.93 करोड़ रुपए और वर्ष 2010-11 में 10,446.03 करोड़ रुपए का पूंजी निवेश हुआ. दूसरी तरफ अखिलेश के शासनकाल में वित्तीय वर्ष 2012-13 में 6,659.55 करोड़ रुपए, 2013-14 में 5,213.03 करोड़ रुपए, 2014-15 में 7,671.2034 करोड़ रुपए और 2015-16 में 7,830.7169 करोड़ रुपए का पूंजी निवेश हुआ. अपने कार्यकाल के अंतिम वर्ष में मायावती ने यूपी में 25052.42 करोड़ रुपयों का पूंजी निवेश कराया था. जबकि अखिलेश यादव के कार्यकाल के अंतिम वित्तीय वर्ष 2016-17 की सूचना सरकार ने दी ही नहीं. ■

feedback@chauthiduniya.com

अखिलेश सरकार ने यह भी ऐलान किया कि कनाडा के रॉब सैम्पसन की कंपनी सेरेस बायोसिस्टम्स ने यूपी सरकार की निवेश नीति से प्रभावित होकर यहां जैविक खाद बनाने के लिए तीन सौ करोड़ के निवेश का करार किया है. इससे यूपी के बेरोजगारों को काम भी मिलेगा. अखिलेश सरकार ने सितम्बर 2015 में मुंबई में आयोजित इन्वेस्टर्स कॉन्क्लेव में 51 हजार करोड़ रुपए के पूंजी निवेश पर करार होने की बात कही थी.

किसानों का कर्ज माफ कर दिया, पर बड़े बकायेदारों का क्या होगा!

उत्तर प्रदेश में एक तरफ पूंजी निवेश के नाम पर धोखा और फरेब होता रहा, तो दूसरी तरफ छोटे किसानों का कर्ज माफ करने से उत्तर प्रदेश सरकार वित्तीय दृष्टिकोण से काफी घाटे में और वित्तीय बोझ से दब गई. कर्ज माफी से बैंकों के हजारों करोड़ रुपए प्रभावित हुए, लेकिन इसकी भरपाई सरकार करेगी. ऐसे में पूंजी निवेश की बड़ी चुनौती योगी सरकार के समक्ष आने वाली है.

आधिकारिक रिपोर्ट बता रही थी कि यूपी में किसानों की कर्ज माफी से बैंकों के 27,420 करोड़ रुपए प्रभावित होंगे. भारतीय स्टेट बैंक की एक शोध रिपोर्ट में कहा गया कि 2016 के आंकड़ों के मुताबिक अधिसूचित वाणिज्यिक बैंकों का उत्तर प्रदेश में किसानों के नाम पर 86,241.20 करोड़ रुपए का कर्ज बाकी है. रिपोर्ट में भारतीय रिजर्व बैंक के वर्ष 2012 के आंकड़ों का जिक्र किया गया, जिसमें कहा गया कि कृषि कर्ज का 31 प्रतिशत सीमांत और छोटे किसानों (ढाई एकड़ तक की जमीन वाले) को दिया गया है. योगी सरकार ने यूपी के छोटे और सीमांत किसानों का कुल मिलाकर 36 हजार 359 करोड़ रुपए का कर्ज माफ किया. इस निर्णय के तहत किसानों द्वारा किसी भी बैंक से लिया गया फसली ऋण माफ कर दिया गया. इसके साथ ही योगी सरकार ने उन सात लाख किसानों का भी कर्ज माफ किया, जो बर्बादी और मुफलिसी के कारण ऋण का भुगतान नहीं कर सके थे और उनकी ऋण-राशि बैंकों की गैर निष्पादित आस्तियों (एनपीए) में शुमार हो गई थी. इस वजह से उन किसानों को और ऋण मिलना बंद हो गया था. ऐसे किसानों को भी राहत देते हुए सरकार ने उनके कर्ज के 5,630 करोड़ रुपए माफ कर दिए. इस फैसले से प्रदेश के राजकोष पर 36,359 करोड़ रुपए का भार आएगा. स्वाभाविक है कि सरकार को अर्थव्यवस्था पर ध्यान देना होगा. कर्ज माफी के उत्तर प्रदेश सरकार के फैसले पर भारतीय रिजर्व बैंक के गवर्नर ऊर्जित पटेल ने कहा भी कि राज्य सरकार द्वारा इसकी भरपाई की गारंटी के बावजूद इससे बैंकों की बैलेंस-शीट बिगड़ेगी और आम कर दाताओं पर बोझ काफी बढ़ेगा. इससे महंगाई के भी बढ़ने की आशंका है. आरबीआई का कहना है कि कर्ज माफी के मौजूदा फैसले के समय उत्तर प्रदेश का सरकारी खजाना सही स्थिति में नहीं है. उत्तर प्रदेश सरकार का घाटा चार साल के उच्चतम स्तर पर है. उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान जैसे तीन बड़े राज्यों में सबसे खराब आर्थिक हालत यूपी की ही है. उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा प्रदेश के किसानों का एक लाख रुपए तक का ऋण माफ करने का ऐलान ऐसे समय में हुआ, जब सरकार का घाटा चार साल के उच्चतम स्तर पर है.

दूसरी तरफ पूंजी की वास्तविक हालत यह है कि सरकार जिन्हें पूंजी निवेशक बताती रही है, उन्हीं में से अधिकांश पूंजी घरानों पर बैंकों या वित्तीय संस्थानों के करोड़ों अरबों रुपए बकाया हैं. सरकार से बकाए पूंजी की वसूली हो नहीं पाती और दूसरी तरफ राजनीतिक वजहों से कर्ज माफ कर घाटे की खाई को और गहरा कर देती है. दूसरा पहलू भी काफी विचित्र है. टैक्स चोरी के मामले में भी केवल व्यवसायिक प्रतिष्ठान ही डिफॉल्टर नहीं हैं, बल्कि राष्ट्रीयकृत बैंक और सरकारी उपक्रम भी टैक्स डिफॉल्टरों की सूची में शामिल हैं. सबसे ज्यादा टैक्स डिफॉल्ट वाली सौ कंपनियों में देश का सबसे बड़ा बैंक, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, दिग्गज ऑटो कंपनी टाटा मोटर्स, प्रमुख ऑयल कंपनी इंडियन ऑयल कॉरपोरेशन और सहारा इंडिया जैसे व्यवसायिक प्रतिष्ठान शुमार हैं. संसद में रखे गए आधिकारिक दस्तावेज बताते हैं कि शीर्ष सौ टैक्स डिफॉल्टर्स पर कुल मिलाकर सरकार के 1.41 लाख करोड़ रुपए बकाया हैं. यह रकम सरकार की कई बड़ी योजनाओं में लगने वाली रकम से भी कहीं ज्यादा है. भारतीय स्टेट बैंक पर 333.6 करोड़ रुपए का टैक्स बकाया है. जबकि टाटा मोटर्स पर 206.5 करोड़, इंडियन ऑयल कॉरपोरेशन पर 210.3 करोड़ रुपए, सहारा समूह पर 230 करोड़ रुपए, टेलीकॉम कंपनी बीएसएनएल पर 2,417 करोड़ रुपए, एनटीपीसी पर 622 करोड़ रुपए और विदेश संचार निगम लिमिटेड पर 505.5 करोड़ रुपए का टैक्स बकाया है. इनके अलावा कोका कोला इंडिया पर 600 करोड़ रुपए का टैक्स बकाया है. इसी तरह वैरन इंटरनेशनल पर 589 करोड़ रुपए, ऑरेकल कॉरपोरेशन और रॉलेक्स होल्डिंग लिमिटेड पर 558 करोड़ रुपए, आदित्य लग्जरी होटल्स पर 564 करोड़ रुपए और रिलायंस एनर्जी पर 176 करोड़ रुपए का टैक्स बकाया है. टैक्स डिफॉल्टर कंपनियों की सूची में नोकिया, देवू मोटर्स, टाटा इंडस्ट्रीज, सत्यम कम्प्यूटर्स और आईबीएमप्राइवेट लिमिटेड का भी नाम शामिल है. इसके अलावा आप सब जानते हैं कि देश में 5,275 बड़े कर्जदार ऐसे हैं, जिन पर बैंकों के अरबों रुपए बकाया हैं. नेता, नौकरशाही, कॉरपोरेट, दलाल और बैंकों के गठजोड़ के कारण बड़े पूंजी घराने भी भारी कर्ज लेकर भाग रहे हैं और जनता का भारी पैसा डूब रहा है. ■

रीतिकाल पर पचौरी विमर्श

अनंत विजय

हिंदी में आलोचना की स्थिति को लेकर बहुधा सवाल खड़े होते रहे हैं. रचनाकारों से लेकर छोटे - मोटे पुरस्कारों से नवाजे गए चंद प्राध्यापकनुमा आलोचक भी इस विधा को कठघरे में खड़े करते रहे हैं. इन छोटे-मोटे आलोचकों को फेसबुक ने एक ऐसा मंच दे दिया है, जहां वो तीन-चार लाइन की फतवेबाजी करके निकल लेते हैं, लेख आदि लिखने की मेहनत कौन करे. आलोचना एक गंभीर कर्म है और वो गहन और विशद अध्ययन की मांग करता है. बगैर अध्ययन के आलोचना करने वाले बहुधा कृति या प्रवृत्ति के अंदर प्रवेश नहीं कर पाते हैं बल्कि रचना को छूकर और ज्यादातर उसका सार-संक्षेप बताकर निकल जाते हैं. कहना ना होगा कि आलोचकों ने आलोचनात्मक कृतियों को इतना गंभीर बना दिया गया कि पाठक उससे दूर होते चले गए. आलोचना को पाठकों तक ले जाने की गंभीर कोशिशें नहीं हुईं, बल्कि इसको और बोझिल करने की कोशिश लगातार होती रही क्योंकि ये माना जाता रहा कि आलोचना जितनी गूढ़ होगी या पाठकों की समझ में नहीं आएगी वो उतनी ही श्रेष्ठ होगी. आलोचना की भाषा को अनायास कठिन बनाया गया, जो अंततः बोझिल हो गई. इसके अलावा आलोचना पिछले तीन चार दशक में एक और दुर्गुण का शिकार हुई वो ये कि उसमें देशी विदेशी विद्वानों के उद्धरणों की भरमार होती चली गई. आलोचक एक पंक्ति लिखते और फिर पूरे पृष्ठ का उद्धरण और फिर उसको जोड़ते हुए दो तीन पंक्तियां और फिर लंबे उद्धरण. पूरी किताब पढ़ने के बाद पाठक के मन में यह सवाल उठता है कि आखिर लेखक क्या कहना चाहता था. इसका उत्तर उनको नहीं मिलता. जन और लोक के तमाम औजारों से आलोचना करने वालों ने इस विधा को जन और लोक से ही दूर कर दिया.

हाल में आलोचक सुधीश पचौरी की एक किताब हाथ लगी, जिसके शीर्षक ने बेहद चौंकाया. इस पुस्तक का शीर्षक है रीतिकाल, सेक्सुअलिटी का समारोह और इसको वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली ने प्रकाशित किया है. सुधीश पचौरी ने हिंदी में अपने लेखन के लिए बिल्कुल नए किस्म की भाषा गढ़ी, अंग्रेजी के सुरों की बहुतायत के साथ-साथ उत्तर प्रदेश की बोलियों से शब्दों को उठाकर इस्तेमाल करने की कला उन्होंने विकसित की. हिंदी के लिए यह कितनी अच्छी स्थिति है, जब हिंदी के शब्द रहते हुए वहां अंग्रेजी के सुरों का प्रयोग किया गया. यह विमर्श का विषय है. कई बार तो हमें भी लगता है कि पचौरी जी को अंग्रेजी के इतने ज्यादा सुरों का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए, क्योंकि उन सुरों के लिए हिंदी में सरल शब्द हैं. यह एक अलहदा विषय है जो अलग से संवाद की मांग करता है. फिलहाल हम बात कर रहे थे, सुधीश पचौरी की नई किताब जो रीतिकाल पर लिखी गई है. रीतिकाल के बारे में यह आम धारणा प्रचलित है कि उस काल खंड में कवियों ने स्त्री देह का, श्रृंगार आदि का रसपूर्ण वर्णन किया है. जब से हिंदी में स्त्री विमर्श की आंधी उठी है, तबसे कई बार देखा गया है कि स्त्री अधिकारों की बात करने वालों को स्त्रियों की रीतिकालीन परिभाषा या उनके वर्णन से आपत्ति है. कई बार यह बात सामने आती है कि रीतिकालीन कवियों ने नायिकाओं का नख-शिख वर्णन किया और उनके संघर्ष आदि के बारे में कुछ भी लिखने की जहमत नहीं उठाई. कहा तो यह जाता है कि हिंदी कविता में स्त्री देह की सत्ता स्थापित हुई. सुधीश पचौरी की यह किताब इस तरह की चालू धारणाओं को निगेट करती है और स्त्री देह की सत्ता की गंभीरता से व्याख्या करते हुए सवाल उठाती है. इस किताब से सुधीश पचौरी ये भी स्थापित करते चलते हैं कि रीतिकाल में स्त्री देह का वर्णन और स्त्रियों के कामुक हाव-भाव का प्रदर्शन एक अलग तरह के विमर्श की मांग करता है. लेखक के मुताबिक 'देह इतिहास' यानि देह पर वे 'दबाव' जिनके जरिए जीवन की गतिविधि और इतिहास की प्रक्रियाएं एक दूसरे में हस्तक्षेप करती हैं और 'देह सत्ता' का मतलब है ऐसी सत्ता जो मानवीय जीवन के रूपान्तरण में भूमिका निभाती हैं.

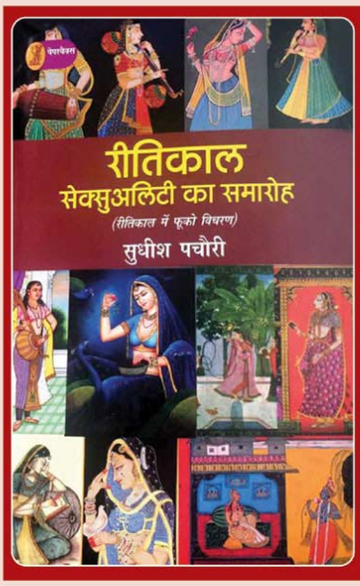

> हिंदी के लिए यह कितनी अच्छी स्थिति है, जब हिंदी के शब्द रहते हुए वहां अंग्रेजी के सुरों का प्रयोग किया गया. यह विमर्श का विषय है. कई बार तो हमें भी लगता है कि पचौरी जी को अंग्रेजी के इतने ज्यादा सुरों का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए, क्योंकि उन सुरों के लिए हिंदी में सरल शब्द हैं. यह एक अलहदा विषय है जो अलग से संवाद की मांग करता है. फिलहाल हम बात कर रहे थे कि सुधीश पचौरी की नई किताब जो रीतिकाल पर लिखी गई है. रीतिकाल के बारे में यह आम धारणा प्रचलित है कि उस काल खंड में कवियों ने स्त्री देह का, श्रृंगार आदि का रसपूर्ण वर्णन किया है. जब से हिंदी में स्त्री विमर्श की आंधी उठी है, तबसे कई बार देखा गया है कि स्त्री अधिकारों की बात करने वालों को स्त्रियों की रीतिकालीन परिभाषा या उनके वर्णन से आपत्ति है. कई बार यह बात सामने आती है कि रीतिकालीन कवियों ने नायिकाओं का नख-शिख वर्णन किया और उनके संघर्ष आदि के बारे में कुछ भी लिखने की जहमत नहीं उठाई.

सुधीश पचौरी कहते हैं कि रीतिकालीन स्त्रियां अपने ढंग से अपने समय की प्रोफेशनल थीं. वे बहुत हद तक पुरुषों के ऊपर निर्भर और अधीन स्त्रियां थीं. उनके हित उन्हीं को साधने पड़ते थे. वे भी अपने तरह से ताकतवर नायिकाएं थीं, भले ही आज की स्त्रियों की तुलना में उनके पास चुनाव की स्वतंत्रता नहीं थी, न स्त्री के प्रॉपर्टी राइट्स थे, न आधुनिक काल से स्त्री-हित में काम करने वाले कानूनों का सहारा था, न स्त्री मुक्ति के आंदोलन थे. सुधीश पचौरी अपनी इस कृति में नायिका भेद के समाजशास्त्र पर विस्तार से चर्चा करते हैं, जो काफी पठनीय और दिलचस्प बन पड़ा है जो आमतौर पर आलोचना में मिलता नहीं है.

रीतिकाल पर अब से पहले जितने भी आलोचनात्मक लेख आदि लिखे गए वो आचार्य शुक्ल की स्थापना को ध्यान में रखते हुए लिखे गए. सुधीश पचौरी उससे कुछ अलग हटकर इस काल की रचनाओं में सेक्सुअलिटी को व्याख्यायित करने की कोशिश करते हैं. जब वो बिहारी सतसई के आधार पर इस काल खंड में घुसते हैं तो वो ये कहते हैं कि उस वक्त का समाज यौन-व्यस्त समाज था, जहां दोहों में परिवार भी नजर आते हैं और कई बार नायक-नायिका का प्रेम-संवाद, गुरुजनों यानि परिवार के बड़े-बूढ़ों की उपस्थिति के बीच भी होता था. यह संवाद नेत्र-भाषा और अनुभवों में होता था. यहां की ज्यादातर नायिकाएं प्रेमचतुरा हैं जो आंखों के इशारों से ज्यादा काम लेती हैं. आंखों पर बिहारी की सतसई का एक दोहा है चलत देत आभरु सुनि, उही परोसिंह नाह/ लसी तमासे की दृगनु हांसी आसुन माही. मतलब कि नायिका किसी पड़ोसी पर अनुरक्त है. इस समय उसका पति विदेश जा रहा है, जिससे वो अपनी आंखों में आंसू भरे हुए है. इतने में ही इसने सुना कि उसका पति उसी पड़ोसी को घर संभालने का भार दे रहा है. यह सुनते ही, हर्ष के कारण, उसकी आंसू भरी आंखों में हंसी आ गई. यह एक सखी दूसरे सखी से कहती है. अब आंखों में हंसी की तो सिर्फ कल्पना ही की जा सकती है. सुधीश पचौरी की इस किताब से आलोचना की जड़ता पर प्रहार तो होता ही है, पचौरी की लाख आलोचना करें लेकिन उनकी स्थापनाओं को इग्नोर नहीं कर सकते. ■

anant.ibn@gmail.com

कूजा (जंगली गुलाब)

परिचय

भावप्रकाश आदि निघंटुओं में इसका वर्णन मिलता है. कुब्जक का आरोही क्षुप 3000 मी. की ऊंचाई तक मध्य एवं पश्चिमी हिमालय तथा अफगानिस्तान एवं नेपाल में प्राप्त होता है. इसका आकार गुलाब जैसा होता है, परन्तु यह गुलाब से बड़ा होता है तथा इस पर कांटे अधिक सघन होते हैं. इसमें पांच पंखुड़ीयुक्त श्वेत पुष्प होते हैं.

औषधीय प्रयोग मात्रा एवं विधि

- **नेत्र रोग :** कुब्जक, अशोक, शाल, आम्र, प्रियंगु, नलिन तथा नीलात्पल, इन सभी के पुष्पों का रेणुका, पिप्पली, हरड़ तथा आंवला के साथ चूर्ण बनाकर मधु तथा घृत मिलाकर, बांस की नलिका में सुरक्षित रख लें. प्रतिदिन इसका अंजन अरने से पित्त-विदग्ध दृष्टि तथा श्लेष्म-विदग्ध दृष्टि में लाभ प्राप्त होता है.
- **नेत्रविकार :** कूजा के मूल को पीसकर नेत्रों के बाहर चारों तरफ लगाने से नेत्ररोगों में लाभ होता है.
- जंगली गुलाब के पुष्प चूर्ण में मुलेठी चूर्ण तथा तुलसी पत्र मिलाकर, क्वाथ बनाकर सेवन करने से श्वास-कास तथा कफज-विकारों में लाभ होता है.
- **पित्तविकार :** कूजा के पंचांग का क्वाथ बनाकर 10-20 मिली मात्रा में सेवन करने से उदरगत पित्त विकृति का शमन होता है.
- जंगली गुलाब के पुष्प चूर्ण को त्रिफला में मिलाकर सेवन करने से विबन्ध का शमन होता है.
- जंगली गुलाब के पुष्पों का गुलकन्द बनाकर सेवन करने से यह पौष्टिक होता है व रक्त-विकार, रक्तपित्त तथा उदर विकारों में यह लाभप्रद होता है.
- जंगली गुलाब के पुष्प चूर्ण में सौंफ तथा मुलेठी मिलाकर काढ़ा बनाकर पिलाने से यह मृदु विरेचक की तरह कार्य करता है तथा विबंध आदि विकारों में लाभ होता है. इसका प्रयोग कोमल प्रकृति के व्यक्तियों तथा बालकों में ही करना चाहिए.
- **त्वचा रोग-** जंगली गुलाब का अर्क निकालकर त्वचा पर लगाने से व्यंग, नीलिका तथा झांई आदि त्वचा विकारों का शमन होता है.
- **ज्वर-** 1 किग्रा कुब्जक मूल, 500 किग्रा द्राक्षा, 100 ग्राम महुआ पुष्प तथा 100 ग्राम गम्भारी फल को 10 लीटर जल में चतुर्थांश अवशेष रहने तक पकाकर, ठण्डा होने पर 13 किलो गुड़, 200 ग्राम धाय पुष्प, 20 ग्राम धत्तूर बीज, 20 ग्राम त्रिकुट, 20 ग्राम कंकोल तथा 5-5 ग्राम इलायची, तेजपत्ता, जायफल एवं लौंग का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर, घृतलिप्त घड़े में भरकर एक माह के लिए बन्द कर दें, एक माह बाद निकालकर 15-30 मिली की मात्रा में पीने से सन्निपात आदि सब प्रकार के ज्वरों में लाभ होता है. ■

प्रयोज्यांग : पुष्प, मूल एवं पंचांग.
मात्रा : चिकित्सक के परामर्शानुसार.

आचार्य बालकृष्ण

साईं वंदना

आध्यात्मिक ज्ञान और विज्ञान

बिना प्रकृति के सूक्ष्म नियमों को ग्रहण करना सम्भव नहीं

डॉ. चन्द्रभानु सतपथी

पिछले अंक से आगे

यदि आइंस्टाइन को आधार या मॉडल मानकर चलें तो इसका तात्पर्य यह है कि प्रकृति के रहस्यों की खोजबीन में लगे वैज्ञानिक बुद्धिसम्पन्न लोगों के लिए एक भिन्न दृष्टिकोण को अपनाना सम्भव है. एक ऐसा दृष्टिकोण जो सभी धर्मों के महान सन्तों ने अपनाया था. लेकिन बिरले लोग ही प्राचीन यूनान के पाइथागोरस जैसे महान व्यक्तियों की तरह विज्ञान और आध्यात्मिकता का समन्वय करने की क्षमता रख सकते हैं. जब सद्गुरुओं ने बाल मानव-सभ्यता को आध्यात्मिक रूप से आगे बढ़ाने के लिए विभिन्न रूपों में प्रयत्न किया, तो यह सुस्पष्ट था कि उन्होंने इस दिशा में कोई जल्दबाजी नहीं की और न ही बहुत सहज रूप से उन्हें ब्रह्म-विज्ञान और दर्शन आदि का ज्ञान प्रदान किया. उस स्तर पर उन्होंने मनुष्य की बुद्धि में कुछ विशेष प्रकार के तर्कों को उत्पन्न किया, जिनके बिना प्रकृति के सूक्ष्म नियमों को ग्रहण कर पाना मानव के लिए सम्भव न हो पाता. वे सरल तर्कों के माध्यम से जाकर बाद में गूढ़ तर्कों को समझ पाए. उन्होंने जो प्राथमिक ज्ञान दिया वह संख्या से संबद्ध सरल गणित और आकृति से सम्बद्ध ज्यामिति का ज्ञान था, जिनसे आगे चलकर विज्ञान की अन्य शाखायें विकसित हुईं. इन प्रतीकों के माध्यम से वे असीम प्रकृति के भिन्न पहलुओं को अत्यन्त सरलता से समझ पाए. दूसरे स्तर पर सद्गुरुओं ने वास्तुकला, कीमिया आदि की अवधारणाएं प्रदान कीं. जैसे कि कोई नवजात शिशु अपने चारों ओर संसार को बहुत आश्चर्य से देखता है, वैसे ही मानव-प्रजाति ने भी सद्गुरुओं द्वारा प्रदान की गई इन अवधारणाओं को अत्यंत उत्सुक होकर ग्रहण करना आरम्भ कर दिया. एक बार जब उनकी अग्रिम भूमिका तैयार हो गई तो उन्होंने उनके मस्तिष्क की कोशिकाओं/उनकी मानसिक प्रक्रिया (सोचने के तरीके) में फेर-बदल किया ताकि वे इन तर्कों के माध्यम से उच्चतर वैज्ञानिक खोजें आदि कर पाने में सक्षम हो सकें. कुछ व्यक्ति जिनमें इस प्रकार की क्षमता का विकास पूर्ण हो गया, तब उन्हें बड़े व्यवस्थित रूप से विचार-प्रक्रिया प्रदान की गई. यही वे कुछ विशिष्ट लोग थे, जिन्होंने विभिन्न वैज्ञानिक सिद्धान्तों को प्रतिपादित किया, जैसे मार्कोनी द्वारा रेडियो-तरंग के नियम का आविष्कार, न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के नियम, अथवा आइंस्टाइन के सापेक्षता के नियम आदि. इस प्रकार की वैज्ञानिक खोज और उससे सम्बन्धित तकनीकी ज्ञान आज बहुत आगे बढ़ गया है. इतना आगे कि यदि

किसी मानव द्वारा अंतरिक्ष पर विचरण, कृन्तकी आनुवंशिकी आदि के प्रयोग पहले हुए होते, तो लोग इनको एक ईश्वरीय चमत्कार ही मानने लग जाते. इसलिए तार्किक रूप से यह कहा जा सकता है कि मनुष्य के मस्तिष्क की क्षमता को क्रमशः बढ़ाकर, उसके ज्ञान के दायरे का विस्तार करने के उद्देश्य से प्रकृति के इन गूढ़ रहस्यों का उद्घाटन किया जा रहा है. इस पृष्ठभूमि के आधार पर यह विचार करें तो यह युक्ति-युक्त लगता है कि मूल वैज्ञानिक विचार वस्तुतः उन आध्यात्मिक लोगों के शक्ति-संचार से उत्पन्न हुआ, जो कि इस भूमंडल पर महत् बुद्धि धारण कर अवतरित हुए. अतः यह स्पष्ट है कि जब इस पृथ्वी को सूक्ष्म एवं रहस्यमय चिंतन-प्रक्रिया का अनुभव नहीं हुआ था, तो इस दिशा में कुछ महान् आत्माओं ने अन्य जीवात्माओं को इस दिशा में सक्रिय किया होगा. निश्चित ही उन महान् आत्माओं ने अपने पिछले जन्मों के विकास-क्रम में इस प्रकार की श्रेष्ठ चेतना-शक्ति या अतीन्द्रिय शक्ति को धारण किया होगा. सामान्यतः जिसे अति मानसिक चेतना कहते हैं- ऐसी चेतनाओं का यह उन्नत स्तर मात्र एक जन्म में नहीं प्राप्त किया जा सकता. ऐसी अति मानसिक चेतना को धारण करने वाले व्यक्तित्व आत्मानुभूति के आधार पर प्रकृति के गूढ़ रहस्यों का उद्घाटन करने में समर्थ हैं. आज वैज्ञानिक साहित्य में काल्पनिक रूप से इस प्रकार के चरित्रों एवं घटनाओं की झलक अंतरतारकीय युद्ध (Inter Steller Warfare) यूएफओ (U.F.O.- Unidentified flying objects) के रूप में देखी जा सकती है. ■

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

साईं भक्तों! आप भी चौथी दुनिया को साई से जुड़ा लेख या संस्मरण भेज सकते हैं. मसलन, साई से आप कब और कैसे जुड़े. साई की कृपा आपको कब से मिलनी शुरू हुई. आप साई को क्यों पूजते हैं. कैसे बनें आप साई भक्त. साई बाबा का जीवन और चरित्र आपको किस तरह से प्रेरित करता है? साई बाबा के बारे में अनेक किवदंतियां हैं, क्या आपके पास भी कुछ कहने के लिए है? अगर हां, तो केवल 500 शब्दों में अपनी बात कहने की कोशिश करें और नीचे दिए गए पते पर भेजें.

जन्मदिन पर विशेष

आज़ादी के समय गोखले होते तो देश नहीं बंटता

संसदीय बहस की स्वस्थ परंपराओं का बीज गोखले ने ही डाला था. संसद में अपनी बातों को बेबाकी और तथ्यपरक तरीके से रखने में वे माहिर थे. बॉम्बे की लेजिस्लेटिव काउंसिल में किसानों से भूमि अधिकार छीनने के मसले पर चर्चा हो रही थी. सरकार बहुमत के बल पर इस विधेयक को पास करा लेना चाहती थी. इस पर गोखले, फिरोजशाह मेहता और कई अन्य सदस्य सदन से वाक आउट कर गए. ब्रिटिश प्रशासक बौखला कर रह गए.

जन्म : 9 मई, 1866
निधन : 19 फरवरी, 1915

चौथी दुनिया ब्यूरो

स्वतंत्रता आंदोलन के मार्गदर्शकों में से एक गोपाल कृष्ण गोखले भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के वरिष्ठ नेता थे. इतिहासकार एनएन कुमार कहते हैं कि अधिकतर लोग गोखले को सिर्फ गांधी के ही राजनीतिक गुरु के रूप में जानते हैं, लेकिन वे सिर्फ राष्ट्रपिता नहीं, बल्कि जिन्ना के भी राजनीतिक गुरु थे. उनका मानना है कि यदि आजादी के समय गोखले जीवित होते तो शायद जिन्ना देश के बंटवारे की बात रखने की हिम्मत ही नहीं जुटा पाते. वे आजीवन हिंदू–मुस्लिम एकता के लिए काम करते रहे. यही कारण है कि जिन्ना उनका बड़ा आदर करते थे. यह बात अलग है कि बाद में जिन्ना ही देश के बंटवारे का कारण बने और उन्होंने अपने राजनीतिक गुरु की शिक्षा का पालन नहीं किया.

कभी महात्मा गांधी ने ये शब्द गोपाल कृष्ण गोखले के लिए कहे थे, मुझे भारत में एक पूर्ण सत्यवादी आदर्श पुरुष की तलाश थी और वह आदर्श पुरुष मुझे गोखले के रूप में मिला. उनके हृदय में भारत के प्रति सच्चा प्रेम और वास्तविक श्रद्धा थी. वे देश की सेवा करने के लिए अपने सारे सुखों और स्वार्थ से परे रहे. एक बार गोखले ने गांधी से कहा था कि यदि देश को समझना है तो इसके करीब जाओ. पूरे देश को देखो, समझो, तब अपनी रणनीति बनाओ. गांधी ने ये बात मरते दम तक याद रखी.

सुंदर कपड़े महानता की पहचान नहीं

कहते हैं, एक बार एक अमीर व्यक्ति गोखले जी से मिलने पहुंचा. उसने देखा कि गोखले अपना फटा कुर्ता सिल रहे हैं. यह देखकर उसने पूछा कि आप जैसा महान व्यक्ति कपड़े सिलने में अपना कीमती समय क्यों बर्बाद कर रहा है? इस पर गोखले जी ने कहा, मैंने अपनी पूरी कमाई देशसेवा में लगाने का संकल्प लिया है. सुंदर कपड़े पहनकर कोई महान नहीं बनता है, व्यक्ति के कर्म ही उसे श्रेष्ठ बनाते हैं. कोई भी कार्य छोटा या बड़ा नहीं होता. यह शब्द सुनकर वह व्यक्ति गोखले के आगे नतमस्तक हो गया.

गोखले का जन्म 9 मई 1866 को महाराष्ट्र के रत्नागिरी जिले में कोतलूक में हुआ था. उनके पिता कृष्ण राव गोखले एक किसान थे. किसानी से परिवार का पेट भरने में असमर्थ होने पर वे क्लर्क का काम करने लगे. उनकी माता सत्यभामा एक घरेलू महिला थीं. पिता की असमय मृत्यु के बाद गोखले को शिक्षा हासिल करने में काफी कठिनाइयां आईं. उनके बड़े भाई गोविन्द को 15 रुपए मासिक पगार मिलती थी, जिसमें से 8 रुपए वे हर माह गोखले की पढ़ाई के लिए भेज देते थे. कई बार ऐसा भी समय आया, जब उन्हें भूखे रहकर और सड़क की बत्ती के नीचे बैठकर पढ़ाई करनी पड़ी.

स्कूल के दिनों का एक वाकया है. एक बार स्कूल में शिक्षक बच्चों से गणित के सवाल हल करवा रहे थे. एक सवाल कुछ अधिक कठिन था, जिसे सिर्फ एक छात्र हल कर सका. शिक्षक ने खुश होकर उसकी प्रशंसा की और उसे पुरस्कार भी दिया. दूसरे दिन वही बालक रोता हुआ कक्षा में आया और पुरस्कार शिक्षक को वापस कर क्षमायाचना करने लगा. छात्र ने बताया कि उसने वह प्रश्न किसी दूसरे से पूछ कर लिखा था. इस प्रकार एक ओर नकल करना और दूसरी तरफ पुरस्कार प्राप्त करना, इस दोहरे अपराध से बालक अत्यंत व्यथित था. घर पर भी वह रात भर सोया नहीं, वरन् रोता रहा था. उसकी ईमानदारी से खुश होकर शिक्षक गद्गद् हो गए और उससे भी बड़ा पुरस्कार प्रदान किया. वही बालक बड़ा होकर न्यायमूर्ति गोपाल कृष्ण गोखले कहलाया.

गोखले ने नहीं पढ़ी, तो पढ़ने योग्य नहीं

गोपाल कृष्ण उस समय किसी भी भारतीय द्वारा पहली बार कॉलेज की शिक्षा प्राप्त करने वाले लोगों में से एक थे. उन्हें अंग्रेजी भाषा का अच्छा ज्ञान था. इतिहास और अर्थशास्त्र के ज्ञान और उसकी समझ ने उन्हें स्वतंत्रता, लोकतंत्र और संसदीय प्रणाली को समझने और उसके महत्व को जानने में मदद की. गोखले पर शिक्षा ग्रहण करने के दौरान पश्चिमी विद्वानों के विचारों का बहुत प्रभाव पड़ा. वे ब्रिटिश साम्राज्यवादी नीतियों के विरोधी थे, लेकिन पश्चिमी सिद्धांतकर जॉन स्टुअर्ट मिल और एडमंड बुर्के के सिद्धांतों को महत्व भी देते थे. वित्तीय मामलों की अद्वितीय समझ और उस पर अधिकारपूर्वक बहस करने की क्षमता से उन्हें भारत का ग्लेडस्टोन कहा जाता है. गोखले एक ऐसा नाम थे, जिसे अंग्रेज भी बड़ी इज्जत से लेते थे. गोखले एक ऐसे स्वाध्यायी व विद्वान थे, जिनके बारे में स्वयं उस समय के भारतीय कमांडर–इन चीफ किचनर ने कहा था, गोखले ने यदि कोई अंग्रेजी पुस्तक नहीं पढ़ी है, तक अवश्य ही वह पढ़ने योग्य नहीं होगी.

जब बग्घी के आगे खुद जुत गए छात्र

स्नातक की पढ़ाई के बाद वे आजीविका के लिए पुणे के न्यू इंग्लिश स्कूल में पढ़ाने लगे. गोखले ने 20 वर्ष तक शिक्षक के रूप में कार्य किया. इस दौरान उन्होंने गणित, अंग्रेजी, अर्थशास्त्र और इतिहास जैसे सभी विषयों को पढ़ाया. उनमें इन सभी विषयों को समान रूप से पढ़ाने की दक्षता थी. इसी कारण उन्हें जन्मजात प्राध्यापक कहा जाता था. गोखले के विचारों की अलीगढ़ के छात्रों पर गहरी

छाप थी. एक बार जब गोखले वहां भाषण देने पहुंचे, तो वहां छात्रों ने उनकी बग्घी के घोड़े हटा दिए. छात्र स्वयं बग्घी में जुत गए. वे बग्घी खींचते हुए गोखले जिंदाबाद, हिन्दुस्तान जिंदाबाद के नारे लगाने लगे और उन्हें भाषण स्थल तक लेकर गए. उनके एक मित्र पटवर्धन कानून के छात्र थे. वे उनसे बराबर वकालत का पेशा अपनाने का आग्रह करते थे. एक बार गोखले ने उनसे कहा, तुम मालामाल हो जाओ और गाड़ियों में घूमो. मैंने तो जीवन में एक साधारण पथिक की तरह चलने का निश्चय किया है.

अध्यापन के रूप में गोखले की सफलता से प्रभावित होकर बाल गंगाधर तिलक ने उन्हें मुंबई स्थित डेक्कन एजुकेशन सोसाइटी में सम्मिलत होने का आमंत्रण दिया. गोखले 1886 में इस सोसाइटी के स्थायी सदस्य बन गए. उन्होंने अंग्रेजी हुकूमत के अधीन विषय पर कोल्हापुर में अपना प्रथम भाषण दिया. अभिव्यक्ति और भाषा प्रवाह के कारण इस भाषण का जोरदार स्वागत हुआ. गोखले लोगों में राष्ट्रीयता की भावना जगाने के लिए शिक्षा को आवश्यक मानते थे. उनकी मान्यता थी कि शिक्षा ही राष्ट्र को संगठित कर सकती है. गोखले 1898 से 1906 के बीच पुणे नगरपालिका के सदस्य व बाद में अध्यक्ष भी रहे. लोग अपनी समस्याएं लेकर उनसे मिलने आते और वे सभी समस्याओं को व्यावहारिक ढंग से सुलझाते.

गोखले जैसे बीसियों बन रहे अब क्या करें

गरीबों की स्थिति में सुधार के लिए 1905 में गोखले ने सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी की स्थापना की. यह संस्था आदिवासियों, बाढ़ व अकाल पीड़ितों की मदद, स्त्रियों की शिक्षा और राष्ट्रप्रेम का भाव जगाने का काम करती थी. शीघ्र ही यह संस्था समाज सेवा करने को तत्पर युवा, उत्साही और निस्वार्थ कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण स्थल बन गई. कार्यकर्ताओं पर गोखले का अत्यंत गहरा प्रभाव था, जिसे देखकर किसी ने कहा था, केवल एक गोखले से ही

हमारी रूह कांपती है. उसके जैसे बीसियों और बन रहे हैं, अब हम क्या करेंगे? अंग्रेजों के अत्याचार पर भारतीयों से एक बार उन्होंने कहा था, तुम्हें धिक्कार है, जो अपनी मां–बहन पर हो रहे अत्याचार को चुप्पी साधकर देख रहे हो. इतना तो पशु भी नहीं सहते हैं.

बाद में गोखले फर्ग्यूसन कॉलेज के संस्थापक सदस्यों में शामिल हुए. फर्ग्यूसन कॉलेज में ही गोखले, महादेव गोविन्द रानाडे के संपर्क में आए. रानाडे एक न्यायाधीश, विद्वान और समाज सुधारक थे, जिन्हें गोखले ने अपना गुरु बना लिया. रानाडे ने उन्हें सार्वजनिक जीवन के क्षेत्र में 15 वर्ष तक प्रशिक्षित किया और ईमानदारी, सार्वजनिक कार्यों के प्रति समर्पण व सहनशीलता का पाठ सुनाया.

वर्ष 1892 में गोखले ने फर्ग्यूसन कॉलेज छोड़ दिया. इसके बाद वे दिल्ली में इम्पीरियल विधान परिषद के सदस्य बने. गोखले को देश की आर्थिक समस्याओं की गहरी समझ थी, जिसे वे बहस के दौरान काफी चतुराई से प्रस्तुत करते थे. सन 1905 में गोखले कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में लाला लाजपतराय के साथ इंग्लैंड गए. उन्होंने ब्रिटिश राजनेताओं और जनता के सामने भारत की सही तस्वीर प्रस्तुत की. वहां 49 दिनों के प्रवास के दौरान उन्होंने करीब 47 जगह विभिन्न सभाओं को संबोधित किया. उनके भाषणों के कारण कई अंग्रेज भी उनके प्रशंसक बन गए. गोखले ने भारत में स्वराज या स्वशासन पाने के लिए नियमित सुधार की वकालत की. उन्होंने 1909 के मार्ले मिंटो सुधारों के प्रस्तुतीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जो अंत में एक कानून बन गया. गोखले के अंग्रेजों के साथ भी करीबी रिश्ते थे. उन्होंने अंग्रेजों से कहा कि वह भारत के प्रशासन में और अधिक भारतीयों को शामिल करें.

गांधी जी कहते थे, गोखले उस गंगा का प्रतिरूप हैं, जो अपने हृदय–स्थल पर सबको आमंत्रित करती रहती है और जिस पर नाव खेने पर उसे सुख की अनुभूति होती है. गांधी जी ने गोखले से स्वराज प्राप्ति का तरीका सीखा. गोखले भी गांधी जी की सादगी और दृढ़ता से बहुत प्रभावित हुए और उन्हें बड़े भाई सा आदर देने लगे.

दक्षिण अफ्रीका में रहने वाले भारतीयों के प्रति गोखले की अत्यधिक सहानुभूति थी. अपने बंधुओं पर होने वाला अन्याय उन्हें अपने ऊपर हुआ अन्याय लगता था. गांधी जी के निमंत्रण पर वे 1912 में दक्षिण अफ्रीका भी गए. वहां उन्होंने दक्षिण अफ्रीका की सरकार से जातीय भेदभाव खत्म करने का आग्रह किया. दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटने पर गांधी जी, गोखले से मिले. वे गोखले के विनम्र स्वभाव व राष्ट्रवाद की भावना से अत्यंत प्रभावित थे.

स्वस्थ संसदीय बहस के प्रणेता थे गोखले

संसदीय बहस की स्वस्थ परंपराओं का बीज गोखले ने ही डाला था. संसद में अपनी बातों को बेबाकी और तथ्यपरक तरीके से रखने में वे माहिर थे. बॉम्बे की लेजिस्लेटिव काउंसिल में किसानों से भूमि अधिकार छीनने के मसले पर चर्चा हो रही थी. सरकार बहुमत के बल पर इस विधेयक को पास करा लेना चाहती थी. इस पर गोखले, फिरोजशाह मेहता और कई अन्य सदस्य सदन से वाक आउट कर गए. ब्रिटिश प्रशासक बौखला कर रह गए. यह पहली ऐसी घटना थी, जब सदन में बहस के दौरान सदस्यों ने वाक आउट किया था. काउंसिल में गोखले की बहसों को पढ़ने के लिए लोग अगले दिन अखबारों का इंतजार करते थे.

दोस्ती में दरार पर कांग्रेस दो फाड़

हालांकि बाल गंगाधर तिलक का मानना था कि संसदीय बहसों से कुछ हासिल नहीं होगा. वे ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ उग्र विरोध के हिमायती थे. वहीं गोखले का विचार था कि भारतीयों को पहले शिक्षित होना चाहिए, तभी वे नागरिक के तौर पर आजादी हासिल कर पाएंगे. 1891–92 में जब अंग्रेजी सरकार द्वारा लड़कियों के विवाह की उम्र दस वर्ष से बढ़ाकर बारह वर्ष करने का बिल पास करवाने की तैयारी शुरू हुई, तब गोखले ने अंग्रेजों के इस कदम का पूरा साथ दिया, लेकिन तिलक इस बात पर विरोध करने लगे कि भारतीयों के आंतरिक मसले पर अंग्रेजों को दखल नहीं देना चाहिए. इस मुद्दे पर गोखले और बाल गंगाधर तिलक के बीच विवाद पैदा हो गया. इस विवाद ने कांग्रेस को दो गुटों में विभाजित कर दिया, एक गरमपंथी और दूसरा नरमपंथी. यह विरोध इतना बढ़ा कि कांग्रेस दो फाड़ हो गई. कभी तिलक कॉलेज में गोखले के दोस्त हुआ करते थे, लेकिन हालात ऐसे बदतर होते चले गए कि 1906 में तिलक को कांग्रेस छोड़नी पड़ी.

गोखले देश की आजादी, सामाजिक सुधार और समाज सेवा हेतु अथक परिश्रम करते रहे. निरंतर श्रम से उनका स्वास्थ्य गिरने लगा. उन्हें मधुमेह और दमा ने घेर लिया. 19 फरवरी 1915 की रात 10 बजकर 25 मिनट पर उन्होंने अंतिम सांस ली. ■

feedback@chauthiduniya.com

विनोद खन्ना ने मुंबई के रिलायंस फाउंडेशन अस्पताल में अंतिम सांस ली

बेहतरीन अभिनेता थे विनोद खन्ना

हैंडसम विनोद को सुनील दत्त ने फिल्म *मन का मीत* (1968) में विलेन के रूप में लॉन्च किया. यह फिल्म दत्त ने अपने भाई को बतौर हीरो लॉन्च करने के लिए बनाई थी. वे तो पीछे रह गए, लेकिन विनोद की चल निकली. हीरो के रूप में स्थापित होने के पहले विनोद ने *आन मिलो सजना, पूरब और पश्चिम, सच्चा झूठा* जैसी फिल्मों में सहायक या खलनायक के रूप में काम किया. गुलजार द्वारा निर्देशित फिल्म *मेरे अपने* से विनोद खन्ना को चर्चा मिली और वे बतौर नायक नजर आने लगे.

श्रद्धांजलि

“विनोद खन्ना सलमान खान के साथ बहुत सी फिल्मों में नजर आ चुके हैं. सलमान उन्हें अपने लिए लकी मानते हैं. एक इंटरव्यू के दौरान विनोद खन्ना ने कहा था कि उनके समय भी हीरो फिट होते थे, लेकिन तब बॉडी दिखाने का ट्रेंड नहीं था. 1999 में विनोद खन्ना को उनके इंडस्ट्री में योगदान के लिए फिल्मफेयर लाइफटाइम अचीवमेंट अवार्ड से नवाजा गया था.”

प्रवीण कुमार

बॉलीवुड में अपने अभिनय से करोड़ों दिलों पर राज करने वाले विनोद खन्ना का लम्बी बीमारी के बाद निधन हो गया. वे 70 साल के थे. विनोद खन्ना ने अपने पूरे करियर में लगभग 141 फिल्मों में काम किया. वे अटल बिहारी वाजपेयी की कैबिनेट में मंत्री भी बने थे. अभी वे गुरदासपुर से भाजपा सांसद थे. पिछले कुछ समय से मुंबई के रिलायंस फाउंडेशन अस्पताल में उनका कैंसर का इलाज चल रहा था. इसी अस्पताल में उन्होंने अंतिम सांस ली. उनके निधन से सारा बॉलीवुड सदमे में है. बता दें कि कुछ समय पहले उनकी एक तस्वीर सामने आई थी, जिसमें वे काफी कमजोर और बीमार नज़र आ रहे थे.

विनोद खन्ना का जन्म 6 अक्टूबर, 1946 को पाकिस्तान के पेशावर में हुआ था. उनके माता-पिता का नाम कमला और किशनचंद खन्ना था. भारत-पाकिस्तान बंटवारे के बाद विनोद खन्ना का परिवार मुंबई आ गया था.

विनोद खन्ना ने अपने फिल्मी करियर की शुरुआत 1968 में *मन का मीत* से की, जिसमें उन्होंने खलनायक का रोल किया था. पहली ही फिल्म के बाद उन्होंने एक साथ 15 फिल्में साइन की. *मेरे अपने, मेरा गांव मेरा देश, इम्तिहान, इनकार, अमर अकबर एंथनी, लहू के दो रंग, कुर्बानी, दयावान और जुर्म* जैसी फिल्मों में उनके अभिनय को खूब सराहा गया. वे आखिरी बार 2015 में शाहरुख खान की फिल्म *दिलवाले* में नजर आए थे. विनोद खन्ना अपने वक्त के सबसे हैंडसम अभिनेताओं में गिने जाते हैं. उन्होंने कई ब्लॉकबस्टर फिल्मों में काम किया.

उनका स्टारडम एक समय अमिताभ बच्चन से भी ज्यादा था. लेकिन शादी के बाद ओशो से प्रभावित होकर विनोद खन्ना 4 साल तक परिवार और करियर से दूर रहे. इस दौरान वे अमेरिका में ओशो के आश्रम में माली का काम कर रहे थे. विनोद खन्ना के दो बेटे अक्षय खन्ना और राहुल खन्ना बॉलीवुड में सक्रिय हैं. ■

बॉलीवुड ने दी श्रद्धांजलि

हेमा मालिनी- हम काफी दुखी महसूस कर रहे हैं. उनके निधन का हमें गहरा दुख है.

शत्रुघ्न सिन्हा – विनोद खन्ना सही मायने में मेरे अपने थे. एक शानदार, आकर्षक व्यक्तित्व, प्रतिभावान कलाकार, एक सुपर स्टार अब नहीं रहे. मेरी तरफ से विनम्र श्रद्धांजलि.

ऋषि कपूर – आप को बहुत याद करूंगा अमर.

इशा देओल- अपने अंकल विनोद खन्ना के निधन की ख़बर से काफी दुखी हूं. ईश्वर उनकी आत्मा को शांति दे.

साजिद खान – विनोद खन्ना जी को श्रद्धांजलि. मेनस्ट्रीम भारतीय सिनेमा में आपके योगदान के लिए धन्यवाद.

मनीषा कोइराला – अपूर्णीय क्षति. एक करिश्माई अभिनेता के निधन पर उनके परिवार के लिए मेरी हार्दिक संवेदना है.

अनुपम खेर – विनोद खन्ना जी के व्यक्तित्व में एक अद्भुत आकर्षण था, ऑन स्क्रीन भी और ऑफ स्क्रीन भी. वे बहुत ही दयालु, मददगार किस्म के आदमी थे. मैं उनके चीते जैसी चाल को बहुत पसन्द करता था.

विवेक आनंद ओबेरॉय – एक आइकॉन दुनिया छोड़ कर चला जाता है, लेकिन उसकी यादें हमेशा साथ रहती है. आप हमें हमेशा याद आएंगे.

वरूण धवन – एक आकर्षक और बेहतरीन अभिनेता के रूप में आप हमेशा भारतीय स्क्रीन के जरिए हमारे बीच रहेंगे. आज, फिल्म इंडस्ट्री ने एक लिजेंड खो दिया है.

कुछ दिनों पहले ही रिलीज हुई थी विनोद खन्ना की फिल्म

विनोद खन्ना की फिल्म *एक थी रानी ऐसी भी* कुछ दिनों पहले ही रिलीज हुई थी. यह फिल्म भाजपा की संस्थापक सदस्य और मध्यप्रदेश की दिवंगत नेता विजयाराजे सिंधिया की जीवनी पर आधारित है. इस फिल्म को मृदुला सिन्हा की किताब *राजपथ से लोकपथ* से भी प्रेरित बताया जा रहा है.

फिल्म *एक थी रानी ऐसी भी* 21 अप्रैल को देश भर में रिलीज हुई. इस फिल्म में अभिनेत्री एवं मथुरा लोकसभा सीट से भाजपा सांसद हेमा मालिनी ने विजयाराजे सिंधिया की भूमिका निभाई है. उनके अलावा फिल्म में विनोद खन्ना, सचिन खेडेकर एवं राजेश शृंगारपुरे ने भी अहम किरदार अदा किया है. विजयाराजे भाजपा की संस्थापक सदस्यों में से एक थी. उनकी एक बेटी वसुंधरा राजे सिंधिया अभी राजस्थान की मुख्यमंत्री हैं, जबकि दूसरी बेटी यशोधरा राजे मध्यप्रदेश में खेल एवं युवा कल्याण मंत्री हैं. ■

सलमान की दरियादिली

“करण जौहर अपने बैनर तले धर्मा प्रोडक्शन द्वारा बाहुबली-2 को उत्तर भारत में रिलीज कर कर चुके हैं. ऐसे में वे नहीं चाहते थे कि सलमान अपने फिल्म का प्रमोशन बड़े पैमाने पर करें. क्योंकि ऐसा करने से बाहुबली-2 के क्रेज में कमी आ सकती थी. करण ने उम्मीद भी जताई कि सलमान अपनी फिल्म का प्रमोशन बाहुबली-2 के बाद करेंगे. सलमान ने भी आगे चलकर ऐसा ही किया और अपनी फिल्म ट्यूबलाइट का प्रमोशन रोक दिया.”

सलमान खान इस समय अपनी फिल्म ट्यूबलाइट को लेकर चर्चा में हैं और वे पिछले कुछ समय से सोशल मीडिया पर फिल्म को लेकर लगातार अपडेट भी कर रहे हैं. सलमान की फिल्म ट्यूबलाइट समय से पहले ही अपने प्रमोशन से दर्शकों के बीच धमाका कर चुकी है. हालांकि ख़बरें थीं कि सलमान खान ने करण जौहर से वादा किया था कि वे बाहुबली की रिलीज से पहले ट्यूबलाइट का प्रमोशन शुरू नहीं करेंगे. लेकिन सलमान ने एक के बाद एक फिल्म ट्यूबलाइट की ख़बरों को सोशल मीडिया अपडेट किया, जिससे सलमान के फैन्स बेहद खुश हैं.

कुछ समय पहले ही फिल्म ट्यूबलाइट की कुछ फोटो भी सोशल मीडिया पर अपलोड की गई थीं, जिसकी वजह से फिल्म को लेकर दर्शकों के बीच जबरदस्त क्रेज देखने को मिल रहा है. सूत्रों की मानें, तो सलमान ट्यूबलाइट को लेकर भरपूर पब्लिसिटी करने जा रहे हैं और पूरी उम्मीद जताई जा रही है कि जल्द ही सलमान ट्यूबलाइट का टीज़र रिलीज़ कर सकते हैं.

बता दें कि करण जौहर अपने बैनर तले धर्मा प्रोडक्शन द्वारा बाहुबली-2 को उत्तर भारत में रिलीज कर कर चुके हैं. ऐसे में वे नहीं चाहते थे कि सलमान अपने फिल्म का प्रमोशन बड़े पैमाने पर करें. क्योंकि ऐसा करने से बाहुबली-2 के क्रेज में कमी आ सकती थी. करण ने उम्मीद भी जताई कि सलमान अपनी फिल्म का प्रमोशन बाहुबली-2 के बाद करेंगे. सलमान ने भी आगे चलकर ऐसा ही किया और अपनी फिल्म ट्यूबलाइट का प्रमोशन रोक दिया. ताकि उनकी और करण जौहर की दोस्ती बरकरार रहें. फिलहाल, हम आपको बता रहे हैं, फिल्म ट्यूबलाइट से जुड़ी कुछ दिलचस्प जानकारियां, जिनके बारे में आप भी जानना चाहेंगे...

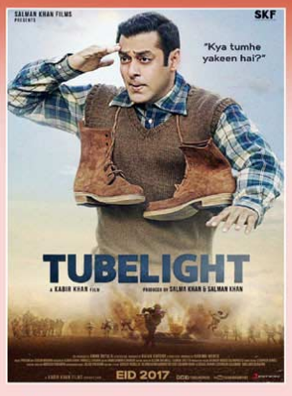

1. फिल्म की शूटिंग मुंबई में भी हुई है. यहां वो सीन फिल्माए गए जहां फिल्म की हीरोइन ज़हू ज़हू सलमान खान से मिलने उनके कश्मीर वाले घर में जाती हैं. इसलिए सेट पर कश्मीर जैसा एक घर भी बनाया गया, जहां ये पूरा सीन शूट हुआ.

2. बताया जा रहा है कि फिल्म में शाहरूख खान एक जादूगर का किरदार निभा रहे हैं और उनके चेहरे पर होगा एक टैटू. अब यह तो फिल्म देखने के बाद ही पता चलेगा कि फिल्म में शाहरूख खान का कैमियो रोल है या नहीं.

3. सलमान खान की ट्यूबलाइट को लेकर एक अफवाह गपशप गली में तैर रही है और इस लिहाज़ से फिल्म की पूरी कहानी लीक हो चुकी है. लेकिन जो अफवाह है, अगर वो सच है तो यकीन मानिए कि ट्यूबलाइट की कहानी शानदार है. क्योंकि बताया जा रहा है कि ट्यूबलाइट हॉलीवुड फिल्म लिटिल ब्वॉय से प्रेरित है. अंतर सिर्फ इतना है कि लिटिल ब्वॉय का लिटिल ब्वॉय है हमारे बिग ब्वॉय सलमान खान. लिटिल ब्वॉय बाप बेटे के संबंधों पर आधारित कहानी थी. एक लड़का था जिसे चीज़ें थोड़ी कम समझ आती थी और इसलिए स्कूल में वो हमेशा मज़ाक का पात्र बना रहता था.

4. फिल्म लिटिल ब्वॉय में एक दिन उसके पिता युद्ध पर जाते हैं, लेकिन वापस नहीं लौटते और वो निकल पड़ता है अपने पिता को ढूंढने. अब अगर ट्यूबलाइट की बात की जाए तो फिल्म में सलमान और सोहेल भाई बने हैं. सलमान को चीज़ें कम समझ आती हैं इसलिए उन्हें लोग ट्यूबलाइट कहकर चिढ़ाते हैं. इस बीच 1964 के युद्ध में उनके भाई सोहेल जाते हैं पर वापस नहीं आते.

5. फिल्म में जब सलमान खान सोहेल को ढूंढने निकलते हैं, तो इसी सफ़र में उनकी मुलाकात होती है फिल्म की हीरोइन ज़हू ज़हू से. ये कहानी, इमोशन्स का पूरा निचोड़ होगी. कबीर खान और सलमान खान की यह तीसरी फिल्म होगी. इससे पहले इस जोड़ी ने एक था टाइगर और बजरंगी भाईजान जैसी सुपरहिट फिल्में दी हैं.■

चौथी दुनिया ब्यूरो feedback@chauthiduniya.com